ऋषि प्रसाद

मासिक पत्रिका

हिन्दी, गुजराती, मराठी, उड़िया, तेलुगू, कन्नड़, अंग्रेजी व सिंधी भाषाओं में प्रकाशित

वर्ष : २०	अंक : १०
भाषा : हिन्दी	(निरंतर अंक : २२०)
१ अप्रैल २०११	मूल्य : रु. ६-००
चैत्र-वैशाख	वि.सं. २०६७-६८

स्वामी : संत श्री आसारामजी आश्रम
प्रकाशक और मुद्रक : श्री कौशिकभाई पो. वाणी
प्रकाशन स्थल : संत श्री आसारामजी आश्रम, मोटेरा, संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग, साबरमती, अहमदाबाद -३८०००५ (गुजरात).
मुद्रण स्थल : विनय प्रिंटिंग प्रेस, ''सुदर्शन'', मिठाखली अंडरब्रिज के पास, नवरंगपुरा, अहमदाबाद- ३८०००९ (गुजरात).
सम्पादक : श्री कौशिकभाई पो. वाणी
सहसम्पादक : डॉ. प्रे. खो. मकवाणा, श्रीनिवास

सदस्यता शुल्क (डाक खर्च सहित)

भारत में

(१) वार्षिक : रु. ६०/-
(२) द्विवार्षिक : रु. १००/-
(३) पंचवार्षिक : रु. २२५/-
(४) आजीवन : रु. ५००/-

नेपाल, भूटान व पाकिस्तान में

(सभी भाषाएँ)

(१) वार्षिक : रु. ३००/-
(२) द्विवार्षिक : रु. ६००/-
(३) पंचवार्षिक : रु. १५००/-

अन्य देशों में

(१) वार्षिक : US $ 20
(२) द्विवार्षिक : US $ 40
(३) पंचवार्षिक : US $ 80

ऋषि प्रसाद (अंग्रेजी)	वार्षिक	द्विवार्षिक	पंचवार्षिक
भारत में	७०	१३५	३२५
अन्य देशों में	US$20	US$40	US$80

कृपया अपना सदस्यता शुल्क या अन्य किसी भी प्रकार की नकद राशि रजिस्टर्ड या साधारण डाक द्वारा न भेजा करें। इस माध्यम से कोई भी राशि गुम होने पर आश्रम की जिम्मेदारी नहीं रहेगी। अपनी राशि मनीऑर्डर या डिमांड ड्राफ्ट ('ऋषि प्रसाद' के नाम अहमदाबाद में देय) द्वारा ही भेजने की कृपा करें।

सम्पर्क पता

'ऋषि प्रसाद', संत श्री आसारामजी आश्रम, संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग, साबरमती, अहमदाबाद-३८०००५ (गुजरात).
फोन नं. : (०७९) २७५०५०१०-११, ३९८७७७८८.
e-mail : ashramindia@ashram.org
web-site : www.ashram.org

विभिन्न चैनलों पर पूज्य बापूजी का सत्संग

A2Z NEWS	care WORLD	संस्कार	सत्संग टी.वी.	JUS one (अमेरिका)	Ashram TV LIVE
रोज सुबह ५-३० व ७-३० बजे तथा रात्रि १०-०० बजे	रोज सुबह ७-०० बजे	रोज दोपहर २-१० बजे से	रोज रात्रि १०-०० बजे	सोम से शुक्र शाम ७ बजे शनि-रवि शाम ७-३० बजे	आश्रम इंटरनेट टीवी २४ घंटे प्रसारण

सजीव प्रसारण के समय नित्य के कार्यक्रम प्रसारित नहीं होते।

✼ A2Z चैनल रिलायंस के 'बिग टीवी' पर भी उपलब्ध है। चैनल नं. 425
✼ care WORLD चैनल 'डिश टीवी' पर उपलब्ध है। चैनल नं. 770
✼ JUS one चैनल 'डिश टीवी (अमेरिका)' पर उपलब्ध है। चैनल नं. 581
✼ इंटरनेट पर www.ashram.org/live लिंक पर आश्रम इंटरनेट टी.वी. उपलब्ध है।

भगवत्प्राप्त महापुरुषों की मनोहर पुष्पमालिका के दिव्य पुष्प : प्रातःस्मरणीय पूज्य संत श्री आशारामजी बापू

(अवतरण-दिवस : २३ अप्रैल २०११)

मानवमात्र आत्मिक शांति हेतु प्रयत्नशील है। जो मनुष्य-जीवन के परम लक्ष्य परमात्मप्राप्ति तक पहुँच जाते हैं, वे परमात्मा में रमण करते हैं। जिनका अब कोई कर्तव्य शेष नहीं रह गया है, जिनको अपने लिए कुछ करने को बचा ही नहीं है, जिनका अस्तित्वमात्र लोक-कल्याणकारी बना हुआ है, वे संत-महापुरुष कहलाते हैं, क्योंकि उनमें परमात्म-तत्त्व जगा है। महान इसलिए क्योंकि वे सदैव महान तत्त्व 'आत्मा' में अर्थात् अपने आत्मस्वरूप में स्थित होते हैं।

यही महान तत्त्व, आत्मतत्त्व जिस मानव-शरीर में खिल उठता है वह फिर सामान्य शरीर नहीं कहलाता। फिर उन्हें कोई भगवान व्यास, आद्य शंकराचार्य, स्वामी रामतीर्थ, संत कबीर तो कोई भगवत्पाद पूज्य लीलाशाहजी महाराज कहता है। फिर उनका शरीर तो क्या, उनके सम्पर्क में रहनेवाली जड़ वस्तुएँ वस्त्र, पादुकाएँ आदि भी पूज्य बन जाती हैं!

इस अवनितल पर विशेषकर इस भारतभूमि का तो सौभाग्य ही रहा है कि यहाँ अति प्राचीनकाल से लेकर आज तक ऐसी दिव्य विभूतियों का अवतरण होता ही रहा है। आधुनिक काल में भी संत-अवतरण की यह दिव्य परम्परा अवरुद्ध नहीं हुई है। आज भी ऐसे महान संतों से यह तपोभूमि भारत वंचित नहीं है, यह हमारे और मानव-जाति के लिए परम सौभाग्य की बात है।

पूज्य संत श्री आशारामजी बापू भी संतों की ऐसी मनोहर पुष्पमालिका के एक पूर्ण विकसित, सुरभित, प्रफुल्लित पुष्प हैं। पूज्यश्री अमाप आत्मिक प्रेम के स्रोत हैं। उनके चहुँओर एक ऐसा प्रेममय आत्मीयतापूर्ण वातावरण हर समय रहता है कि आनेवाले भक्त-श्रद्धालुजन निःसंकोच अपने अंतर में वर्षों से दबे हुए दुःख, शोक तथा चिंताओं की गठरी खोल देते हैं और हलके हो जाते हैं। कुछ लोग कहते हैं : ''बापूजी! आपके पास न मालूम ऐसा कौन-सा जादू है कि हम फिर-फिर से आये बिना नहीं रह पाते।''

पूज्यश्री कहते हैं : ''भाई! मेरे पास ऐसा कुछ भी जादू या गुप्त मंत्र नहीं है। जो संत तुलसीदासजी, संत कबीरजी के पास था वही मेरे पास भी है। **वशीकरण मंत्र प्रेम को...**

बस इतना ही मंत्र है। सबको प्रेम चाहिए। वह प्रेम मैं लुटाता हूँ। सब कुछ तो पहले ही लुटा चुका हूँ इसलिए मुझे ऐसा अखूट प्रेम का धन 'आत्मधन' मिला है कि उसे कितना भी लुटाओ, खुटता नहीं, समाप्त नहीं होता। लोग अपने-अपने स्वार्थ को नाप-तौलकर प्रेम करते हैं किंतु इधर तो कोई स्वार्थ है नहीं। हमने सारे स्वार्थ उस परम प्यारे प्रभु के स्वार्थ के साथ एक कर दिये हैं। जिसके हाथ में सबके प्रेम और आनंद की चाबी है उस प्रभु को हमने अपना बना लिया है, इसलिए मुक्तहस्त प्रेम बाँटता हूँ। आप भी सबको निःस्वार्थ भाव से, आत्मभाव से देखने और प्रेम करने की यह कला सीख लो।''

ऐसे महापुरुष जिस ईश्वरीय आनंद में सदा मग्न रहते हैं, वही आनंद वे अपने आसपास भी लुटाते रहते हैं। जो ठीक ढंग से उन्हें थोड़ा भी समझ पाते हैं, वे उनसे लाभ लेकर साधना में आगे बढ़ते रहते हैं।

जिनका अहं गल गया है, जो भीतर से मिटे हैं, जिनका देहाध्यास विसर्जित हो चुका है ऐसे

महापुरुषों के द्वारा ही विश्व में महान कार्यों का सृजन होता रहता है। ऐसे संतों के कारण ही इस पृथ्वी में रस है और दुनिया में जो थोड़ी-बहुत खुशी और रौनक देखने को मिलती है वह भी ऐसे महापुरुषों के प्रकट या गुप्त अस्तित्व के कारण ही है। 'जिस क्षण विश्व से ऐसे महापुरुषों का लोप होगा, उसी क्षण दुनिया घिनौना नरक बन जायेगी और शीघ्र ही नष्ट हो जायेगी।' - ऐसा स्वामी विवेकानंद ने कहा था।

विनोद-विनोद में ऐसे महापुरुष मनुष्यों को आत्मज्ञान का जो अमृत परोसते जाते हैं, उसका संसार में कोई मुकाबला नहीं है।

पूज्य बापूजी का जीवन इस धरती पर मनुष्य-जाति के लिए दिव्य प्रेरणा-स्रोत है, आनंद का अखूट झरना है। उनका सान्निध्य संसार के लोगों के हृदयों में ज्ञान की वर्षा करता है, उन्हें शांतिरस से सींचता है, प्रेम को पल्लवित करता है, सूझबूझ को सात्त्विक रस से सींचता है; समत्व की सुरभि, विवेक का प्रकाश तथा श्रद्धा और सजगता का सत्त्व भरता है। उनके सत्संग-सान्निध्य और आत्मिक दृष्टिपातमात्र से लोगों के हृदय में स्फूर्ति तथा नवजीवन का संचार होता है। उनकी हर अँगड़ाई तथा क्रिया में मानव का हित छिपा रहता है। उनके दर्शनमात्र से जीवन से निराश और मुरझाये हुए लाखों-लाखों हृदय नवीन चेतना लेकर खिल उठते हैं। जैसे विशाल समुद्र में कोई जहाज भटक जाय, उसी प्रकार संसार की भूलभुलैया में भटके हुए लोगों के लिए पूज्यश्री का जीवन एक दिव्य प्रकाश-स्तम्भ है। उनके सान्निध्य में आनेवाला हर व्यक्ति उनकी महक से महक उठता है।

पूज्य बापूजी एक ऐसे विशाल वटवृक्ष की भाँति इस धरती पर फैले हुए खड़े हैं, जिसके नीचे हजारों-हजारों यात्राओं तथा दुःखों के ताप से, संसार-ताप से तप्त हुए लोग विश्राम लेकर अपने वास्तविक गंतव्य स्थान की ओर गति कर रहे हैं। देवर्षि नारदजी कहते हैं :

संसारतापे तप्तानां योगः परमौषधः ।

संसार के त्रिविध तापों से तपे हुए लोगों के लिए पूज्य बापूजी का सत्संग-योग परम अमृत का काम करता है। रंक से लेकर राजा तक और बाल से लेकर वृद्ध तक सभी पूज्यश्री की कृपा के पात्र बनकर अपने जीवन को ईश्वरीय सुख की ओर ले जा रहे हैं। अमीर-गरीब, सभी जाति, सभी सम्प्रदाय, सभी धर्मों के लोग उनके ज्ञान का, आत्मानंद का, आत्मानुभव और योग-सामर्थ्य का प्रसाद लेते हैं। वह स्थान धन्य है जहाँ वे रहते हैं। वह माता धन्य है जिनकी कोख से वे प्रकट हुए हैं। वह मनुष्य बड़भागी है जो उनके सम्पर्क में आता है। वह वाणी धन्य है जो उनका स्तवन करती है। वे आँखें धन्य हैं जो उनका दर्शन करती हैं और वे कान धन्य हैं जिनको उनके उपदेशामृत-पान करने का अवसर मिलता है।

वे सदैव परमात्मा में स्थित रहते हुए जगत के अनंत दुःखों से पीड़ित प्राणियों के लिए ज्ञान, भक्ति, योग, कीर्तन, ध्यान, आनंद-उल्लास की धारा बहाते रहते हैं, समस्त दुःखों के मूल अज्ञान का नाश करते हैं। उनकी वाणी से निरंतर ज्ञानामृत झरता है। वे जो उपदेश देते हैं वह पावन शास्त्र हो जाता है। उनके नेत्रों से प्रेममयी, शीतल, सुखद ज्योति निकलती है। उनके हृदय से प्रेम तथा आत्मानंद के स्रोत (झरने) फूटते हैं। उनके मस्तिष्क से विश्व-कल्याण के विचार प्रसूत होते हैं। जिस पर उनकी दृष्टि पड़ती है, उसके मन, बुद्धि, अंतःकरण पावन होने लगते हैं। जो उनके सम्पर्क में आ जाता है, वह पाप-ताप से मुक्त होकर पवित्रात्मा होने लगता है। उपनिषद् कहती है :

यद् यद् स्पृश्यति पाणिभ्यां यद् यद् पश्यति चक्षुषा ।
स्थावराणापिमुच्यंते किं पुनः प्राकृता जनाः ॥

'ब्रह्मज्ञानी महापुरुष ब्रह्मभाव से स्वयं के हाथों द्वारा जिनको स्पर्श करते हैं, आँखों द्वारा जिनको देखते हैं वे जड़ पदार्थ भी कालांतर में जीवत्व पाकर मोक्ष प्राप्त कर लेते हैं तो फिर उनकी दृष्टि में आये हुए व्यक्तियों के देर-सवेर होनेवाले मोक्ष के बारे में शंका ही कैसी !'

उन महापुरुषों के भीतर इतना आनंद भरा होता है कि उन्हें आनंद हेतु संसार की ओर आँख खोलने की भी इच्छा नहीं होती । जिस सुख के लिए संसार के लोग अविरत भागदौड़ करते हैं, रात-दिन एक कर देते हैं, एड़ी से चोटी तक का पसीना बहाते हैं फिर भी वास्तविक सुख नहीं ले पाते केवल सुखाभास ही उन्हें मिलता है, वह सच्चा सुख, वह आनंद उन महापुरुषों में अथाह रूप से हिलोरें लेता है और उनका सत्संग-दर्शन करनेवालों पर भी बरसता रहता है ।

धन्य हैं ऐसे महापुरुष जिन्होंने अपने सब स्वार्थों की, मोह-ममता की, अहं की होली जला दी और परमात्म-ज्ञान की पराकाष्ठा पर पहुँचकर दुस्तर माया से पार हो गये तथा मनुष्य-जीवन के अंतिम लक्ष्य उस परम निर्भय आत्मपद में आरूढ़ हो गये । लाख-लाख वंदन हैं ऐसे आत्मज्ञानी महापुरुषों को जो संसार के त्रिताप से तपे लोगों को उस परम निर्भय पद की ओर ले चलते हैं । कोटि-कोटि प्रणाम हैं ऐसे महापुरुषों को जो अपने एकांत को न्योछावर करके, अपनी ब्रह्मानंद की मस्ती को छोड़कर भी दूसरों की भटकती नाव को किनारे ले जा रहे हैं । हम स्वयं आत्मशांति में तृप्त हों, आत्मा की गहराई में उतरें, सुख-दुःख के थपेड़ों को सपना समझकर उनके साक्षी सोऽहं स्वभाव का अनुभव करके अपने मुक्तात्मा, जितात्मा, तृप्तात्मा स्वभाव का अनुभव कर पायें, उसे जान पायें - ऐसी उन महापुरुष के श्रीचरणों में प्रार्थना है । ❐

व्याध से बना राजा पुरुयशा

(पूज्य बापूजी की पावन अमृतवाणी)

(वैशाख मास व्रत : १८ अप्रैल से १७ मई)

'स्कंद पुराण' में कथा आती है कि पांचाल देश के राजा पुरुयशा के राज्य के चारों ओर एकाएक शत्रुओं ने घेरा कर दिया और वह राज्यलक्ष्मीविहीन हो गया । अपने व पत्नी के प्राण बचाकर वह धीरे से भाग निकला और जंगलों की गिरि-गुफाओं में जाकर छिप गया । पुरुयशा ने अपने सर्वज्ञ गुरु याज और उपयाज का मानसिक चिंतन किया । गुरु समझ गये कि हमारा शिष्य खूब गहराई से हमारा चिंतन कर रहा है । गुरुदेव अपने शिष्य की दृढ़ भक्ति देखकर उस जंगल की छुपने योग्य गुफा तक पहुँच गये ।

राजा ने अपना दुखड़ा रोया : ''महाराज ! मेरा सर्वनाश हो गया । नंगे पैर, नंगे सिर और पहने वस्त्रों से हम जान बचाकर यहाँ पहुँचे हैं । ऐसा तो मैंने क्या पाप किया कि साधारण नागरिक जैसा भी मेरा घर नहीं है ? मेरे न कोई पुत्र है, न भाई है और न ही हितकारी मित्र ही है । शत्रु कहीं मुझे मार न डालें इसलिए मैं गिरि-गुफाओं में प्राण बचाने को भटक रहा हूँ ।''

गुरु याज और उपयाज बोले : ''पुरुयशा ! जरूर तुम्हारे किसी कुकृत्य का फल एकाएक उत्पन्न हुआ है । आदमी का इष्ट मजबूत होता है

तो अनिष्ट नहीं होता और जब अनिष्ट जोर पकड़ता है तथा इष्ट कमजोर होता है तभी यह दशा आती है। इसलिए बुद्धिमान आदमी को सुख के समय भी इष्ट कर्म, जप-ध्यान, व्रत-उपवास आदि करते रहना चाहिए।''

राजा की दुःखद स्थिति पर उन्हें दया आयी। वे पद्मासन बाँधकर तीन अंजलि जल ले के समाधि में बैठे और संकल्प किया कि 'राजा का भूतकाल दिखे।' मुनियों ने पुरुयशा के प्रारब्ध में, भूतकाल में ध्यान के द्वारा प्रवेश किया। दस जन्मों तक के उसके कृत्य देखकर विस्मय में पड़ते हुए मुनियों ने आँखें खोलीं और कहा : ''पुरुयशा ! तूने पूर्वकाल में बड़े क्रूर कर्म किये थे। तू पहले के दस जन्मों तक महापापी व्याध रहा है। तू कभी सर्वव्यापक भगवान नारायण की शरण नहीं गया और पाप-ताप मिटानेवाली, कानों को पवित्र करनेवाली हरिकथा कभी नहीं सुनी। जीभ को पवित्र करनेवाला भगवान का नाम, हाथों को पवित्र करनेवाला सत्कर्म और दान, पैरों को पवित्र करनेवाले भगवद्धाम, सत्संग-स्थल की यात्रा तूने नहीं की। एक जन्म, दो जन्म नहीं ऐसे तेरे नौ जन्म बीत गये थे क्रूर कर्म करते हुए !

दसवें जन्म में तू सह्य पर्वत पर पुनः व्याध हुआ। तू पक्षियों को मारता, घोंसलों में उनके बच्चे बिलखते रहते, इसी कारण तुझे इस जन्म में कोई पुत्र नहीं प्राप्त हुआ। तेरा स्वभाव विश्वासघाती था इसलिए तुझे सहोदर भाई भी नहीं मिला। तू राहगीरों को लूटता था इसलिए तेरा कोई मित्र भी नहीं रहा। तू दान-पुण्य नहीं करता था इसलिए दरिद्रता तेरे सिर पर, जीवन पर छायी हुई है। साधु पुरुषों का तिरस्कार करने के कारण तू पराजित होकर जीता है। तूने सदा दूसरों को उद्वेग में डाला इसलिए तुझे दुःसह वनवास मिला। सब तेरे क्रूर स्वभाव के कारण तेरा तिरस्कार करते थे। सबका अप्रिय होने के कारण तुझे असह्य दुःख मिला है। तेरे क्रूर कर्मों के फल से ही इस जन्म में मिला हुआ राज्य भी छिन गया है।

उस दसवें जन्म में पुरुयशा ! तू वन में विचरण कर रहा था और एक ऋषि वहाँ से पसार हुए। वैशाख मास था। ऋषि भगवद्भक्ति, तीर्थ-सेवन और संतों के संग की इच्छा से वहाँ से गुजर रहे थे। तुझसे उन्होंने मार्ग पूछा और तूने अपने मन में यह विचार किया कि मैं इतने कुकर्म तो करता हूँ, चलो आज एक साधु को बता दूँ कि इस तरफ जलाशय है और आगे संत रहते हैं। फिर तेरे मन में हुआ कि गर्मी है, साधु बाबा पसीने से तर-बतर हुए हैं तो शीतलता देनेवाला एक पंखा (पलाश का सूखा पत्ता) पकड़ा दिया। बस, इतने-से तेरे पुण्य कि वैशाख मास में ऋषि स्नान करने जायें तथा शरीर के स्नान के बाद हृदय को भगवद्कथा के स्नान से पावन करें, ऐसी जगह की तरफ तूने केवल उनको संकेत करके दिखा दिया और एक पंखा दान कर दिया। जब तू मरा तो इसी पुण्य-प्रताप से तेरा सूक्ष्म शरीर चन्द्रमा की किरणों तक पहुँचा, फिर वह अन्न में आकर स्थित हुआ और वह अन्न राजा ने खाया और तू राजकुमार पुरुयशा बना। तूने राजवैभव का सुख भोगा किंतु पूर्व की गंदी आदतों के कारण अभी भी कोई सत्कर्म नहीं किया। सुख-सुविधा आने के बाद भी जप-तप, सत्संग और साधना नहीं की। तो जो ऋषि की सेवा का पुण्य था इष्ट, वह दुर्बल हो गया और तेरे अनिष्ट कर्म फल देने को तत्पर हो गये। यही कारण है कि तू वन में मारा-मारा भटक रहा है।''

पुरुयशा मुनीश्वर के चरणों में पड़ा :

''पुरुयशा राजा मार्ग चाहता है ।''

मुनियों ने शांतमना होकर उद्धार का उपाय खोज निकाला कि ''तन से, वाणी से, मन से दुष्ट चेष्टा का त्याग करके वैशाख मास का स्नान, श्रीहरि का सुमिरन कर व हरि का ज्ञान देनेवाले संतों के चरणों में जा । संत परब्रह्म परमात्मा में, ईश्वर में गोता मारकर जब ईश्वर से स्पर्श की हुई वाणी बोलें, उसे सुनकर तू अपने कानों के द्वारा हृदय को पवित्र कर तो तेरे दस-दस जन्मों के पाप कट जायेंगे और तू इहलोक के वैभव को तो पायेगा साथ ही परम वैभव परमात्म-सुख व भगवान की भक्ति को भी पा लेगा । आज अक्षय तृतीया है, इस दिन दिये गये दान, किये गये स्नान, जप, तप व हवन आदि शुभ कर्मों का अनंत फल मिलता है, इससे तू जल्दी अपने मनोरथ को पूर्ण कर लेगा ।''

राजा पुरुयशा ने गुरुदेव का पत्र-पुष्प, कंदमूल आदि से जो कुछ पूजन-सत्कार करना था, प्रदक्षिणा करनी थी किया और वैशाख मास के पुण्यस्नान का संकल्प लिया । भगवान नारायण की स्तुति व संतों का संग करने का संकल्प... अब उसके लिए अपनी पूर्व की पापराशि को जलाने का सुंदर अवसर आ गया था । पुरुयशा वैशाख मास में एकादशी का उपवास, तीर्थ का सेवन, ब्राह्ममुहूर्त में स्नान, संतों का संग, अक्षय तृतीया का जप-तप, परमात्म-ध्यान व प्राणों की गति का नियमन करके प्राणबल के धन से इतना बलवान हुआ कि शत्रुओं ने जो राज्य छीन लिया था, देखते-ही-देखते उन शत्रुओं को परास्त कर दिया ! बाकी के जो छोटे-छोटे राजा थे वे पुरुयशा को राज्य की आय का हिस्सा देने लगे, खण्डीय राजा बन गये । पुरुयशा वैशाख स्नान, संतों का संग, भक्ति का रंग और 'भगवान अपना चैतन्य, शुद्ध-बुद्ध आत्मा होकर बैठे हैं' - ऐसा प्रकाश पाकर इतना तो पुण्यात्मा, धीर हुआ कि राजकाज सँभालने की उसकी विलासी वृत्ति, अहंकार सजानेवाली वृत्ति शांत होकर प्रजा की सेवा करके प्रजा के अंदर छुपे हुए प्रजा के पतियों के पति परमात्मा को प्रसन्न करने में लग गयी । पतियों का पति होता है परमात्मा । **पाति इति पतिः ।** उस परमात्मा की कथा सुनकर पुरुयशा का चित्त अब राजभोग से भी उपराम होने लगा ।

'राज्य चला गया था तो अच्छा हुआ । इस बहाने गुरुवरों की प्रीति और ज्ञान मिला कि दुष्ट कर्म का फल दुष्ट भोग है, श्रेष्ठ कर्म का फल श्रेष्ठ भोग है । लेकिन ये भोग आखिर आयुष्य नष्ट कर देते हैं और भोगनेवाला शरीर भी जीर्ण-शीर्ण होकर मर जाता है, फिर भी जो रहता है वह मैं कौन हूँ ? शत्रुओं ने घेर लिया, राज्य छीन लिया, दर-दर की ठोकरें खाता जंगल की गुफा में कंदमूल खाता हुआ जिया तब भी 'मैं' था और ऋषि को वैशाख मास में स्नान-स्थल का निर्देश करने व पंखा देने की सेवा और प्रणाम करने से राज्य मिला, उस समय राज्य-मद से छका हुआ अहंकारी रावण के रास्ते का मानों पथिक होकर जिया था तब भी 'मैं' था । गुफा में जाकर सिकुड़ के रहा तब भी 'मैं' था और वैशाख मास का स्नान, मौन, जप, दान, गुरुसेवा आदि सत्कर्म के प्रभाव से इतना प्रभावशाली हो गया तब भी 'मैं' हूँ ।...'

गुरु के सत्संग-ज्ञान से पुरुयशा की बुद्धि सूक्ष्म हुई । इस प्रकार उसने मन में चिंतन किया और उसके दस-दस जन्मों के घातक कर्मों के पाप नष्ट हुए । वह यशस्वी राजा हुआ और यश का उपभोग न करते हुए यश का उपयोग करके परम यशस्वी आत्मा-परमात्मा की भक्ति और प्रीति पाकर धन्य हो गया, मुक्त हो गया । ❐

रामावतार मध्याह्नकाल में क्यों ?

(श्रीरामनवमी : १२ अप्रैल)

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्रीरामजी के अवतार-ग्रहण का पावन दिवस है - श्रीरामनवमी। श्रीरामजी चैत्र मास नवमी को दिन के मध्याह्नकाल में १२ बजे अवतरित होते हैं। श्रीकृष्ण अंधकारमयी मध्यरात्रि को प्रकट होते हैं। इन अवतारों के प्रकट होने में थोड़ी शंका (गूढ़ रहस्य है) और शंका का समाधान बुद्धि में निखार लायेगा। भगवान जब सर्वव्यापक हैं, ब्रह्म हैं, अकर्ता हैं, अभोक्ता हैं, विभु हैं, एक कण भी उनके सिवाय नहीं है, ऐसे सर्वसमर्थ सच्चिदानंदघन परमात्मा हैं तो फिर प्रकट होने के लिए रामावतार में मध्याह्न के १२ बजे का और कृष्णावतार में मध्यरात्रि १२ बजे का समय क्यों चुना ? ये अवतार मध्याह्न और मध्यरात्रि में हुए, इसके पीछे क्या रहस्य है ? जो निर्गुण-निराकार हैं वे सगुण-साकार होकर मध्यकाल क्यों चुनते हैं ?

भये प्रगट कृपाला
दीनदयाला कौशल्या हितकारी...

जो परिस्थितियों को बदलनेवाली समझकर अपने समत्व में कुशल हैं वे कौशल्याजी हैं। दशरथ भक्तिमय हृदयवाले थे और कौशल्या ज्ञानमार्ग में निपुण थीं। ज्ञान मध्याह्न का सूर्य है, प्रकाश है। मध्यकाल अर्थात् आधा दिन इधर, आधा दिन उधर, बीच का काल है यह मध्याह्नकाल। ऐसे ही एक वृत्ति उठी और दूसरी उठने को है, उसके मध्य का समय भगवद्-प्राकट्य का समय है। एक विचार उठा और दूसरा उठने को है, उसके बीच में जो मध्यकाल है, एक श्वास भीतर गया और फिर बाहर आया उसका जो मध्यकाल है वहाँ भगवद्सत्ता, ब्रह्मसत्ता है, ईश्वरीय प्राकट्य है। ऐसे ही रात्रि की मध्य दशा अर्थात् घोर निराशा, अंधकार-ही-अंधकार हो, सब ओर से थक गये हों, हार गये हों तो भगवान की शरण में पहुँचो।

तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत ।
तत्प्रसादात्परां शान्तिं स्थानं प्राप्स्यसि शाश्वतम् ॥

'हे भारत ! तू सब प्रकार से उस परमेश्वर की ही शरण में जा। उस परमात्मा की कृपा से ही तू परम शांति को तथा सनातन परम धाम को प्राप्त होगा।' **(गीता : १८.६२)**

जीवन में चारों तरफ अंधकार, निराशा आ जाय तो भगवान की शरण लो। यह अर्थ भी कृष्णावतार से निकाला जा सकता है। दूसरा अर्थ है मध्यरात्रि अर्थात् एक विचार आया, दूसरा विचार आने के बीच की अवस्था वह कर्षित, आकर्षित, आह्लादित, आनंदित करनेवाली चैतन्य अवस्था है। रामावतार में दिन के मध्यकाल का सूर्य चमचमा रहा है अर्थात् ज्ञान के प्रकाश में अपने शुद्ध स्वरूप को देखो।

वृत्ति आरूढ़ चैतन्य जो चिदाभास है, जो सुख-दुःख का एहसास करता है, उसके एहसास करने का भी एहसास... रात्रि की अंधकारमयी मध्य अवस्था... कुछ नहीं सूझता है तो भगवान की शरण ले लें।

आदमी किसी-न-किसीका आश्रय लेता है। व्यक्ति बिना आश्रय के नहीं जीता। मुझे कोई आश्रय नहीं चाहिए ऐसा कहनेवाला भी किसी-न-किसीके आश्रित है। जो बोलते हैं कि भगवान निर्गुण, निराकार हैं, वे भी ज्योतिस्वरूप के ध्यान का आश्रय लेते हैं। जब आश्रय लेना ही है तो समर्थ का आश्रय

लो । कैकेयी ने मंथरा का आश्रय लिया था - हीन आश्रय था । रावण ने शूर्पणखा का, कपटमुनि (कालनेमि) का आश्रय लिया था तो बदले में तबाही मिली लेकिन जो भगवान का, भगवत्प्राप्त महापुरुषों का आश्रय लेते हैं वे महान हो जाते हैं । शबरी भीलन जैसी व्यक्ति, निराधार व्यक्ति भी भगवद्-आश्रय लेती है, सत्संग का आश्रय लेती है तो महान हो जाती है। रावण चीज-वस्तु और पदार्थों का आश्रय लेता है, वरदानों का आश्रय लेता है लेकिन वरदानदाता (आत्मा-परमात्मा) में विश्रांति नहीं पाता तो पिछड़ जाता है। इस प्रकार इन अवतारों के पीछे बड़ी आध्यात्मिक लीलाएँ, सूचनाएँ और प्रेरणाएँ छुपी हुई हैं ।

सीताजी की जीवन-लीलाओं में भी बड़ा तात्त्विक रहस्य छुपा हुआ है । सीता माने वृत्ति । सीताजी रामजी के करीब हैं लेकिन सीताजी की नजर स्वर्ण के मृग पर जाती है तो रामजी को बोलती हैं कि 'मुझे वह मृग ला दो ।' जब सोने के मृग पर तुम्हारी वृत्तिरूपी सीता जाती है तो उसे राम का वियोग हो जाता है । सोने के मृग पर अर्थात् धन-दौलत पर जब हमारा चित्त जाता है तो अंदर के आत्मराम से हम विमुख हो जाते हैं । फिर लंका मिलती है, स्वर्ण मिलता है लेकिन शांति नहीं मिलती । उसी वृत्ति को यदि राम की मुलाकात करानी हो तो बीच में हनुमानजी चाहिए ।

सौ वर्ष आयुष्यवाला जीवन... उस जीवन में परमात्मा के लिए छलाँग मार दें । उस जीवन के भोग-विलास से छलाँग मार दें । जामवंत को बुलाया, इसको बुलाया, उसको बुलाया... कोई बोलता है एक योजन कूदूँगा, कोई बोलता है दो योजन । हनुमानजी सौ योजन समुद्र कूद गये । माप करेंगे तो भारत के किनारे से लंका सौ योजन नहीं है लेकिन शास्त्र की कुछ गूढ़ बातें हैं कि जीवन जो सौ वर्षवाला है, उस जीवन के रहस्य को पाने के लिए छलाँग मारने का अभ्यास और वैराग्य हो । हनुमानजी को अभ्यास और वैराग्य का प्रतीक कहा है । अभ्यास और वैराग्यरूपी हनुमान सीताजी को रामजी से मिला देंगे ।

हमारी जो सीतारूपी चेतना है, वृत्ति है, वह नीचे की ओर न जाय अर्थात् वासनानुसारी न हो । रामजी उत्तर भारत में हुए और रावण दक्षिण की तरफ । उत्तर ऊँचाई में है और दक्षिण निचाई में है । ऐसे ही आम आदमी की वृत्तियाँ शरीर के नीचे के हिस्से में रहती हैं और जब वह काम-विकार से घिर जाता है तो उसकी आँख की पुतली नीचे की ओर आ जाती है । जब वह क्रोध से भर जाता है तो उसकी सीतारूपी वृत्ति नीचे आ जाती है। सीता जब रावण की अशोक वाटिका में होती है तो बेचैन होती है । ज्यादा समय रावण के यहाँ ठहर नहीं सकती । काम के करीब हमारी वृत्ति ज्यादा समय ठहर नहीं सकती । चित्त में काम आ जाता है तो बेचैनी आ जाती है लेकिन चित्त में राम आ जाता है तो आनंद-आनंद हो जाता है। रावण की अशोक वाटिका में सीताजी नजरकैद हैं लेकिन सीताजी की रामजी में निष्ठा है तो रावण अपना मनमाना कुछ कर नहीं सकता । ऐसे ही हमारी वृत्ति में यदि दृढ़ता है, राम के प्रति पूर्ण आदर है तो काम हमें नचा नहीं सकता। उस दृढ़ता के लिए साधन और भजन है । इस सीतारूपी चित्तवृत्ति को दृढ़ बनाने के लिए, संकल्प को मजबूत बनाने के लिए जप-तप चाहिए, स्वाध्याय चाहिए, सुमिरन चाहिए ।

श्रीरामनवमी के दिन भगवान राम की स्मृति, भगवन्नाम का जप बड़ा पुण्यदायी है । श्रीरामनवमी के पावन पर्व पर यही पुनीत संदेश है कि आप भी **'अव्यक्तं च परब्रह्म सच्चिदानंद विद्यते सदा राम'** जो सत्-चित्-आनंदस्वरूप, अव्यक्त, परब्रह्म, निरंतर रमणशील सत्ता है, जो अनंत कोटि ब्रह्माण्डों का अधिष्ठान है और जो अपना-आपा बनकर सदा आपके साथ है, उस रामतत्त्व में विश्रांति पा लो । ❑

ब्रह्मचर्य की महिमा

अर्जुन और अंगारपर्ण गंधर्व

अर्जुन अपने भाइयों सहित द्रौपदी के स्वयंवर-स्थल पांचाल देश की ओर जा रहा था, तब बीच में गंगातट पर बसे सोमाश्रयायण तीर्थ में गंधर्वराज अंगारपर्ण (चित्ररथ) ने उसका रास्ता रोक दिया । वह गंगा में अपनी स्त्रियों के साथ जलक्रीड़ा कर रहा था । उसने पांडवों को कहा : ''मेरे यहाँ रहते हुए राक्षस, यक्ष, देवता अथवा मनुष्य कोई भी इस मार्ग से नहीं जा सकता । तुम लोग जान की खैर चाहते हो तो लौट जाओ ।'' तब अर्जुन कहता है : ''मैं जानता हूँ कि सम्पूर्ण गंधर्व मनुष्यों से अधिक शक्तिशाली होते हैं, फिर भी मेरे आगे तुम्हारी एक नहीं चलेगी । तुम्हें जो करना हो सो करो, हम तो इधर से ही जायेंगे ।''

अर्जुन के इस प्रतिवाद से गंधर्व बड़ा क्रोधित हुआ और उसने पांडवों पर तीक्ष्ण बाण छोड़े । अर्जुन ने अपने हाथ में जो जलती हुई मशाल पकड़ी थी, उसीसे उसके सभी बाणों को निष्फल कर दिया । फिर गंधर्व पर आग्नेय अस्त्र चला दिया । अस्त्र के तेज से गंधर्व का रथ जलकर भस्म हो गया और वह स्वयं घायल एवं अचेत होकर मुँह के बल गिर पड़ा । यह देखकर उसकी पत्नी कुम्भीनसी बहुत घबरायी और अपने पति की रक्षार्थ युधिष्ठिर से प्रार्थना करने लगी । तब युधिष्ठिर ने अर्जुन से उस गंधर्व को अभयदान दिलवाया ।

जब अंगारपर्ण होश में आया तब बोला : ''अर्जुन ! मैं परास्त हो गया, इसलिए अपने पूर्व नाम अंगारपर्ण को छोड़ देता हूँ । मैं अपने विचित्र रथ के कारण चित्ररथ कहलाता था । वह रथ भी आपने अपने पराक्रम से दग्ध कर दिया है । अतः अब मैं दग्धरथ कहलाऊँगा । मेरे पास 'चाक्षुषी' विद्या है जो मनु ने सोम को, सोम ने विश्वावसु को व विश्वावसु ने मुझे प्रदान की थी । यह गुरु की विद्या किसी कायर को मिल जाय तो नष्ट हो जाती है । जो छः महीने तक एक पैर पर खड़ा रहकर तपस्या करे, वही इस विद्या को पा सकता है परंतु अर्जुन ! मैं आपको ऐसी तपस्या के बिना ही यह विद्या प्रदान करता हूँ ।

इस विद्या की विशेषता यह है कि तीनों लोकों में कहीं भी स्थित किसी वस्तु को आँख से देखने की इच्छा हो तो उसे उसी रूप में इस विद्या के प्रभाव से कोई भी व्यक्ति देख सकता है । अर्जुन ! इस विद्या के बल से हम लोग मनुष्यों से श्रेष्ठ माने जाते हैं और देवताओं के तुल्य प्रभाव दिखा सकते हैं ।''

अंगारपर्ण ने अर्जुन को चाक्षुषी विद्या, दिव्य घोड़े एवं अन्य वस्तुएँ भेंट कीं ।

अर्जुन ने उससे पूछा : ''गंधर्व ! तुमने हम पर एकाएक आक्रमण क्यों किया और फिर हार क्यों गये ?''

तब गंधर्व ने बड़ा मर्म भरा उत्तर दिया । उसने कहा : ''शत्रुओं को संताप देनेवाले वीर ! यदि कोई कामासक्त क्षत्रिय रात में मुझसे युद्ध करने आता तो किसी भी प्रकार जीवित नहीं बच सकता था क्योंकि रात में तो हम लोगों का बल और भी बढ़ जाता है । अपने बाहुबल का भरोसा रखनेवाला कोई भी पुरुष जब अपनी स्त्री के सम्मुख किसीके द्वारा अपना तिरस्कार होते देखता है तो सहन नहीं कर पाता । मैं जब अपनी स्त्री के साथ जलक्रीड़ा कर रहा था, तभी आपने मुझे ललकारा, इसीलिए मैं क्रोधाविष्ट हुआ और आप पर बाणवर्षा की लेकिन यदि आप यह पूछो कि मैं आपसे पराजित क्यों हुआ तो इसका उत्तर है : **(शेष पृष्ठ १४ पर)**

अपने क्षुद्र स्वार्थ के चलते कई समाचार चैनलों द्वारा देश के प्रतिष्ठित संतों के विरुद्ध किये जा रहे दुष्प्रचार का विदेशों में अपने देश की छवि पर कितना बुरा असर पड़ रहा है इसकी जानकारी इंग्लैण्ड की एक बड़ी कम्पनी 'ग्लोबट्रॉटर्स ट्रैवल एंड टूर्स' के ऑपरेशन्स प्रमुख श्री महेन्द्र तँवरजी ने प्रधानमंत्री श्री मनमोहन सिंह को हाल ही में लिखे पत्र से हो जाती है । अपने पत्र में महेन्द्रजी ने लिखा है कि भारत की छवि विदेशों में एक पवित्र भूमि के रूप में है, जहाँ शांति की खोज में पूरे विश्व से पर्यटक हर वर्ष आते हैं । यहाँ के तीर्थ-स्थानों की यात्रा व संतों के दर्शन-सत्संग से विदेशी पर्यटकों को मानसिक शांति व आनंद का अनुभव होता है ।

श्री तँवर ने आगे लिखा है कि पिछले दो-तीन वर्षों से भारत के कुछ समाचार चैनलों पर देश के बड़े-बड़े संत-महात्माओं के चरित्रहनन का घिनौना प्रयास लगातार चल रहा है । इन कार्यक्रमों के कारण हमारा भी व्यापार लगातार प्रभावित हो रहा था, इसलिए चैनलों द्वारा लगाये जा रहे आरोपों की जाँच करने मैं स्वयं भारत आया था । यहाँ आकर हमारी खोजबीन से यही बात सामने आयी कि देश के सुप्रसिद्ध संतों पर झूठे आरोप लगाकर कुछ समाचार चैनल अपनी टी.आर.पी. की लड़ाई लड़ रहे हैं । उनको इस बात का जरा भी अफसोस नहीं है कि उनके द्वारा किये जा रहे इन कार्यों का देश व समाज पर क्या प्रभाव पड़ेगा ! मैंने उन्हीं दिनों एक समाचार चैनल 'आज तक' पर दिखाये एक कार्यक्रम 'हे राम' के विषय में पूरी जाँच-पड़ताल की तो पता चला कि यह प्रसिद्ध संतों को फँसाने के लिए उनसे कई बार की गयी बातचीत को काट-छाँटकर बनाया गया एक प्रोग्राम था। जिसे वे कमेन्ट्री द्वारा सनसनीखेज बनाकर संतों को दोषी दिखाना चाहते थे । मैंने इस विषय में जब चैनल के अधिकारियों से पूछताछ की तो उन्होंने 'उलटा चोर कोतवाल को डाँटे' की तर्ज पर कहा कि उन्होंने जो ठीक समझा दिखा दिया । मैं चाहूँ तो उन पर कानूनी कार्यवाही कर सकता हूँ । टूरिज्म सेक्टर भारतीय अर्थव्यवस्था के कुल जीडीपी

(सकल घरेलू उत्पाद) में लगभग ६.२३ प्रतिशत का योगदान देता है तथा रोजगार के क्षेत्र में भी इस इंडस्ट्री का योगदान ८.७८ प्रतिशत है ।

इस स्थिति में भारत कैसे कुछ समाचार चैनलों को भारतवर्ष का पर्यटन उद्योग विध्वंस करने का मौका दे रहा है ! ये केवल देश को अरबों रुपयों की आर्थिक हानि ही नहीं पहुँचा रहे हैं, बल्कि ये लोग देश की प्रगति में बाधा डालने का एक राष्ट्रीय अपराध भी कर रहे हैं । विदेशों में ईसाई मिशनरियों व इसलामिक संस्थाओं के समाचारों को वहाँ की प्रेस व मीडिया खूब बढ़ा-चढ़ाकर दिखा रहे हैं, किंतु एक भारतीय मूल का होने के नाते यह देखकर मैं बहुत दुःखी हुआ हूँ कि भारत का एक मीडियावर्ग केवल अपने निजी स्वार्थ के लिए संतों को बदनाम कर स्वयं को प्रगतिशील मान रहा है ।

भारत आकर ही मुझे पता लगा कि हमारे संत आध्यात्मिकता का प्रचार-प्रसार कर केवल देश के नागरिकों का चरित्र-निर्माण ही नहीं कर रहे हैं बल्कि समाजसेवा के कार्यों में भी वे विश्व की बड़ी-से-बड़ी कल्याणकारी संस्थाओं को टक्कर दे रहे हैं !

इस विषय में उन्होंने देश के महान संत आशारामजी बापू की संस्था श्री योग वेदांत सेवा समिति का उदाहरण भी दिया । श्री महेन्द्र के विचार में संत श्री आशारामजी बापू के आश्रमों की शृंखला विश्व में सबसे बड़ी है, जो समाज में शिक्षा, स्वास्थ्य व चरित्र-निर्माण के अतिरिक्त देश में दैवी आपदाओं के समय भी लोक कल्याण के कार्यों में सबसे आगे रहती है ।

महेन्द्र ने देश में आयी सुनामी आपदा का एक उदाहरण देकर बताया कि उस समय संत श्री आशारामजी बापू की 'श्री योग वेदांत सेवा समिति' व उनके हजारों कार्यकर्ता सुनामी-पीड़ितों को अनाज, दवाइयाँ, टेन्ट व कम्बल तो बाँट ही रहे थे, इसके अतिरिक्त उन्होंने इस भयंकर प्राकृतिक आपदा में बेघर हुए लोगों को स्थायी आवास भी बनाकर दिये हैं । यह तो एक उदाहरण मात्र है । मैं यह सुनकर आश्चर्यचकित रह गया कि देश में चरित्र-निर्माण के लिए यह संस्था १७,००० से अधिक बाल संस्कार केन्द्र एवं कई शिक्षण संस्थान भी चला रही है ! यह जानना सचमुच अद्भुत था कि श्री योग वेदांत सेवा समिति देश में अनेकों गौशालाएँ भी चला रही है और इन गौशालाओं में गायों के मूत्र व गोबर का भी औषधियों व अगरबत्ती में उपयोग कर इन गौशालाओं को स्वावलम्बी बना दिया गया है ।

संसार की एक अग्रणी टूर एवं ट्रैवल कम्पनी के ऑपरेशन्स प्रमुख श्री महेन्द्र तँवर अपने भारत प्रवास के दौरान मुझसे भी मिले थे । उन्होंने अत्यंत गम्भीर होकर एक बार मुझसे कहा था कि संत आशारामजी बापू द्वारा किये जा रहे कार्यों को देखकर मैं सचमुच आश्चर्यचकित रह गया हूँ । शिक्षा, स्वास्थ्य, धार्मिक साहित्य प्रकाशन, गौसेवा तथा देश की आनेवाली पीढ़ी का चरित्र-निर्माण सभी कार्य राष्ट्रीय-स्तर पर वे कितने सुव्यवस्थित रूप से चला रहे हैं । विश्वास ही नहीं होता कि एक व्यक्ति इतने कार्य कैसे कर सकता है ! यदि बापूजी हमारे देश (इंग्लैण्ड) में होते तो कई विश्वविद्यालय प्रबंधन (मैनेजमेंट) पर लेक्चर के लिए अपने यहाँ इनको आमंत्रित करते तथा इन्हें मैनेजमेंट की बड़ी-से-बड़ी मानद डिग्री भी प्रदान करते ।

यह वास्तव में भारत का दुर्भाग्य है कि न्यूज चैनल अपने कतिपय स्वार्थ के लिए ऐसे महान पुरुषों की भी निंदा करते हैं । वास्तव में ये भारत के ढीले-ढाले कानूनों का लाभ उठा रहे हैं । भारत सरकार को जरूर ही इन राष्ट्रद्रोही समाचार चैनलों के विरुद्ध कड़ी कार्यवाही करनी चाहिए ।

श्री महेन्द्र तँवरजी ने अपनी खोज में इस दुष्प्रचार का कारण 'चैनलों की अपनी-अपनी टी.आर.पी. बढ़ाने की होड़' माना है, जो आंशिक रूप से तो ठीक है पर वास्तव में इसके पीछे एक गहरी साजिश है । कई दशकों से मिशनरियों के धर्मपरिवर्तन के चल रहे निर्बाध कार्यक्रम में देश के प्रतिष्ठित संत सबसे बड़ी बाधा बन रहे थे । पिछले कुछ वर्षों से संतों द्वारा धर्म के प्रति लोगों में जागरण का जो अभियान तेजी से चला है, उसके कारण मिशनरियों का धर्मपरिवर्तन का धंधा काफी मंदा पड़ गया है । अतः संतों को अपने रास्ते से हटाने के लिए, लोगों में इनके प्रति नफरत फैलाने के लिए साजिशकर्ताओं ने समाचार चैनलों तथा मीडिया का सहारा लिया और इन्हें भरपूर आर्थिक प्रलोभन देकर आये दिन झूठी, मनगढ़ंत, भड़काऊ खबरें गढ़वायीं तथा पूरे जोर-शोर से उनका प्रचार किया । यहाँ उल्लेखनीय है कि इन समाचार चैनलों में अधिकांश पर विदेशी पूँजी-निवेशकों का स्वामित्व है अतः यह काम और भी आसान हो गया है । पिछले कुछ वर्षों में इन मिशनरियों के पास विदेशों से कितना पैसा आया और वह कहाँ खर्च हुआ इसकी अच्छी तरह पूरी जाँच होनी चाहिए । एन.जी.ओ. के माध्यम से इन लोगों को मिल रही सरकारी आर्थिक सहायता की भी ईमानदारी से निष्पक्ष जाँच होने पर सारी सच्चाइयों का पर्दाफाश हो जायेगा और संतों के विरुद्ध हो रहे कुप्रचार के मूल कारणों का पता चल जायेगा ।

- अशोक पंडित

संरक्षक एवं प्रबंध सम्पादक,

'आदर्श पंचायती राज ग्रुप' ।

(संदर्भ : मासिक समाचार पत्र 'आदर्श पंचायती राज', दिल्ली, फरवरी २०११) ❑

ढूँढ़िये संतों के नाम !

इस तालिका में बारह संतों के नाम छिपे हैं । तो सामने घड़ी रखिये और पेंसिल लेकर लग जाइये इस बुद्धि की खुराक के सेवन में । कितने मिनटों में आप ये नाम खोज पाते हैं यह नोट कर लीजिये । इसका उत्तर अगले अंक में प्रकाशित किया जायेगा ।

चां	बा	स	र	म	नं	ऋ	की	जी	टे	च	ए
ज्ञा	बा	क	दु	व	ध	च	र	सं	र्ज	म	न
नी	टी	पा	ल	ग	र	म	त	र्मा	ए	ब	व
व	ना	ज्ञा	ने	श्व	र	आ	र्थ	क	र्म	स	व
अ	म	द	सा	व	सा	त	ना	ती	य	दा	त
मु	वे	सं	द	रा	स	थ	झ	श्री	म	म	ध
च	ल	ध	म	न	क	दा	ल	र	ई	रा	न
हं	ह	जी	सं	सा	ल	प	र	हा	बा	र्थ	रा
जी	बा	र	म	ण	म	ह	र्षि	सू	रा	म	हे
पू	शं	क	रा	चा	र्य	स	अं	ख	मी	स	आ
झ	रे	वि	त्र	ल	माँ	यी	म	द	नं	आ	ब
क	सं	झ	क	सं	त	ना	म	दे	व	म	क

(पृष्ठ ११ से 'ब्रह्मचर्य की महिमा' का शेष)

ब्रह्मचर्यं परो धर्मः स चापि नियतस्त्वयि ।
यस्मात् तस्मादहं पार्थ रणेऽस्मि विजितस्त्वया ॥

ब्रह्मचर्य सबसे बड़ा धर्म है और वह आपमें निश्चित रूप से विद्यमान है। हे कुंतीनंदन ! इसीलिए युद्ध में मैं आपसे हार गया हूँ ।''

(महाभारत - आदिपर्वणि चैत्ररथ पर्व : १६९.७१)

जरा-जरा बात में जो लोग आकर्षित होते रहते हैं उनका मन और तन दुर्बल रहता है, यह तो सर्वविदित है। अतः तन और मन की दुर्बलता मिटाने के इच्छुक को ब्रह्मचर्य का आश्रय लेना चाहिए। 'दिव्य प्रेरणा-प्रकाश' पुस्तक पढ़ें। कई युवान पढ़ते हैं और साल-साल, छः-छः महीनों के ब्रह्मचर्य का व्रत ले लेते हैं। कई ऐसे परिवार हैं कि बेटा हुआ और अब छः-छः साल से ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं । ऐसे हैं हरि के प्यारे, बापू के दुलारे ! उनका स्वास्थ्य देखते ही पता चलता है। धन्य हैं ऐसे गुरुभक्त ! ❑
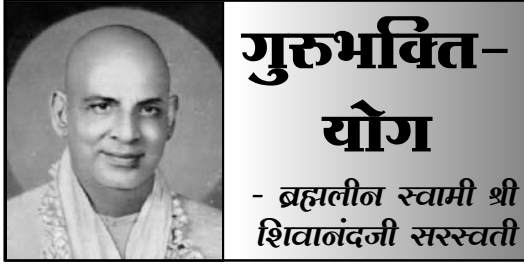
गुरुभक्ति-योग

- *ब्रह्मलीन स्वामी श्री शिवानंदजी सरस्वती*

गुरु की सेवा

❈ शिष्य के लिए तो गुरुआज्ञा-पालन जीवन का कानून है।

❈ अपने दिव्य गुरु की सेवा करने का कोई भी मौका चूकना नहीं।

❈ जब आप अपने दिव्य गुरु की सेवा करो तब एकनिष्ठ और वफादार रहना।

❈ गुरु पर प्रेम रखना, आज्ञापालन करना यानी गुरु की सेवा करना।

❈ गुरु की आज्ञा का पालन करना उनका सम्मान करने से भी बढ़कर है।

❈ गुरुआज्ञा का पालन त्याग से भी बढ़कर है।

❈ हर किसी परिस्थिति में अपने गुरु को तमाम प्रकार से अनुकूल हो जाओ।

❈ अपने गुरु की उपस्थिति में अधिक बातचीत मत करो।

❈ गुरु के प्रति शुद्ध प्रेम, यह गुरुआज्ञा-पालन का सच्चा स्वरूप है।

❈ अपनी उत्तमोत्तम वस्तु प्रथम अपने गुरु को समर्पित करो, इससे आसक्ति सहज में मिटेगी।

❈ शिष्य को ईर्ष्या, डाह एवं अभिमानरहित, निःस्पृह और गुरु के प्रति दृढ़ भक्तिभाववाला होना चाहिए। वह धैर्यवान और सत्य को जानने के निश्चयवाला होना चाहिए।

❈ शिष्य को अपने गुरु में दोष नहीं देखने चाहिए।

❈ शिष्य को गुरु के समक्ष अनावश्यक एवं अयोग्य प्रलाप नहीं करना चाहिए।

❈ गुरु के द्वारा जो सद्ज्ञान प्राप्त होता है, वह माया अथवा अध्यास (भ्रांत धारणा) का नाश करता है।

❈ एक ही ईश्वर माया के कारण अनेक रूपों में दिखता है, ऐसा ज्ञान जिसको गुरुकृपा से होता है, वह सत्य को जानता है और वेदों को समझता है।

❈ गुरुसेवा और पूजा के द्वारा प्राप्त निरंतर भक्ति से, तीक्ष्ण धारवाले ज्ञान के कुल्हाड़े से तू धीरे-धीरे पर दृढ़तापूर्वक इस संसाररूपी वृक्ष को काट दे।

❈ गुरु जीवन-नौका के कर्णधार हैं और ईश्वर उस नौका को चलानेवाले अनुकूल पवन हैं।

❈ जब मनुष्य को संसार के प्रति घृणा उपजती है, उसे वैराग्य आता है और गुरु के दिये हुए उपदेशों का चिंतन करने के लिए वह शक्तिमान होता है, तब ध्यान का बार-बार अभ्यास करने के कारण उसके मन की अनिष्ट प्रकृति दूर होती है।

❈ गुरु से भलीप्रकार जान लिया जाय तभी मंत्र के द्वारा शुद्धि पैदा होती है।

शिष्यवृत्ति के सिद्धांत

❈ मनुष्य अनादिकाल से अज्ञान के प्रभाव में होने के कारण गुरु की सहाय के बिना आत्मसाक्षात्कार नहीं कर सकता। जो ब्रह्म को जानते हैं वे ही दूसरे को ब्रह्मज्ञान दे सकते हैं।

❈ सयाने मनुष्य को चाहिए कि वह अपने गुरु को आत्मा-परमात्मारूप जानकर अविरत भक्तिभावपूर्वक उनकी पूजा करे अर्थात् उनके साथ तदाकार बने।

❈ शिष्य को गुरु एवं ईश्वर के प्रति सन्निष्ठ भक्तिभाव होना चाहिए।

❈ शिष्य को आज्ञाकारी बनकर सावधान मन से एवं निष्ठापूर्वक गुरु की सेवा करनी चाहिए और उनसे भगवद्भक्त के कर्तव्य अथवा भगवद्धर्म जानना चाहिए। ❐
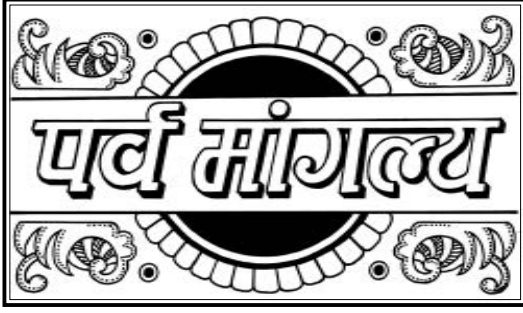
महापुरुषों का अवतरण-दिवस मनाने के लाभ

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

(पूज्य बापूजी का अवतरण-दिवस : २३ अप्रैल)

मैं अपना जन्मदिवस मनाना नहीं चाहता क्योंकि वास्तव में मेरा जन्म था नहीं, है नहीं, हो सकता नहीं । जन्म हुआ इस मरनेवाले शरीर का, और मैं काहे को मरनेवाले शरीर का जन्मदिवस मनाऊँ ! लाखों-लाखों शिष्य, साधक मनाते हैं इस बहाने बच्चों को कापियाँ बँटती हैं, गरीबों को कपड़े बँटते हैं, भोजन बँटता है, कहीं पैसे-दक्षिणा बँटती है, कहीं कीर्तन-यात्राएँ होती हैं । तो मैं गिने-गिनाये हजार, दस हजार, बीस हजार लोगों के बीच अपना जन्मदिवस मनाकर घाटे का सौदा क्यों करूँ ! अभी तो लाखों लोग मना रहे हैं मेरे साधक-शिष्य और करोड़ों लोगों तक इस आध्यात्मिक प्रसाद का फायदा जा रहा है ।

वास्तव में आपका जन्म था नहीं, है नहीं, होगा नहीं । जन्म होता है शरीर का । आप शरीर के पहले थे, अभी हैं, मरने के बाद भी रहेंगे । भगवान का आत्मा और आपका आत्मा एक ही जात का है और शरीर संसार की जात का है । संसार बदलता है तो शरीर भी बदलता है लेकिन आत्मा ज्यों-का-त्यों !

संसार से पृथक् होकर संसार का ज्ञान होता है लेकिन भगवान से प्रीति करके एकाकार होकर भगवान का ज्ञान होता है । आप भगवान के सनातन सपूत हैं । 'भगवान मेरे आत्मा हैं, चैतन्य हैं, ज्ञानरूप हैं, सुखरूप हैं, शाश्वत हैं । जन्म, मृत्यु, बुढ़ापा शरीर का होता है, संसार का होता है, भगवान का भी नहीं होता, मेरा भी नहीं होता ।'- इस प्रकार का आपको दिव्य ज्ञान होने से आप भगवत्प्राप्ति में एकदम छलाँग मार लेंगे । जैसे शिवजी ने देखा कि पार्वती को मायके जाना है ।

शंकर सहज स्वरूप सँभारा ।
लागी समाधि अखंड अपारा ॥

अपने आत्मस्वरूप में कोई फरियाद नहीं है, कोई कमी नहीं है, कोई दुःख नहीं है । मन का चाहा नहीं होता तो लोग दुःख मानते हैं । मन का चाहा होता है तो सुख मानते हैं लेकिन सुख-दुःख होकर चले जाते हैं फिर भी जो रहता है वह दिव्य स्वभाव है अपना । तो शिवजी को अपना दिव्य स्वभाव याद है इसलिए शिवजी अपने सहज स्वरूप में समाधिस्थ हो गये ।

भगवान के कर्म और जन्म को दिव्य जानें तो आप भी अपने दिव्य स्वभाव में जग जायेंगे । महात्मा का जन्मदिवस मनाने से हमको क्या फायदा होता है ? हमको यह ज्ञान होता है कि जैसे महात्मा के जन्म और कर्म दिव्य हैं, वैसे ही हमारे भी जन्म और कर्म दिव्य हो सकते हैं ।

अहंकार को पोसने के लिए कर्म साधारण आदमी करता है । महात्मा कर्म करेंगे तो दूसरों को सत्प्रेरणा मिले, सद्ज्ञान मिले । स्वर्ग की बात करेंगे ताकि लोग संयम से रहें, नरक की बात करेंगे ताकि लोग पाप से बचें । पाप से बचाने के लिए महात्मा की प्रवृत्ति है । स्वर्ग के आकर्षण से बचाकर स्वर्गीय काम करने के लिए महाराज प्रेरणा करते हैं और इन दोनों को नन्हा करके स्वर्ग और नरक जिससे प्रतीत होता है उस परमात्मा में विश्रांति, परमात्मा का ज्ञान और परमात्मा में प्रीति दिलाने की प्रवृत्ति होती है महात्मा की । इसीलिए महात्मा की जन्मतिथि मनाते हैं ।

आत्मज्ञान से बढ़कर कोई ज्ञान नहीं है, आत्मसुख से बढ़कर कोई सुख नहीं है और आत्म-

विश्रांति से बढ़कर कोई सामर्थ्य का साधन नहीं है। 'शरीर मैं हूँ' - यह गलती निकाल दो। शरीर के बाद भी तुम रहते हो। तो तुम्हारा जन्म भी दिव्य हो गया। इस प्रकार मानने से आपको पुनर्जन्म नहीं लेना पड़ेगा। सुख का लालच, दुःख का भय, शत्रु से बदला लेना और मित्र से जन्म-जन्म मिलते रहना - इस आसक्ति का भंडाफोड़-कार्यक्रम हो जायेगा। मित्र तो कहीं-कहीं मिलेगा लेकिन 'सबमें मित्र छुपा है' - ऐसा ज्ञान हो गया तो आनंद-ही-आनंद है। शत्रु से बदला क्या लो, अहंकार व लापरवाही मिटाने के लिए विघ्न-बाधा और शत्रु की व्यवस्था है प्रकृति की और विषाद तथा निराशा मिटाने के लिए मित्र की व्यवस्था है। तो शत्रु-मित्र, सफलता-विफलता देकर भगवान हमारा भी जन्म-कर्म दिव्य बनाना चाहते हैं। जैसे सूर्यनारायण को अर्घ्य देते हैं तो अपनी बुद्धि और आरोग्य की वृद्धि होती है, ऐसे ही महात्मा और भगवान के जन्म-कर्म को दिव्य जानने से हमारा भी जन्म-कर्म दिव्य होने लगेगा।

अपने स्वार्थ के लिए कर्म करते हैं तो वह कर्म बंधन हो जाता है, परहित के लिए कर्म करते हैं तो कर्म दिव्य हो जाता है। अपनी देह की ममता से जीते हैं तो तुच्छ जीवन हो जाता है, आत्मप्रीति से जीते हैं तो दिव्य जीवन हो जाता है। भगवान और महात्मा जीते हैं परहित के लिए तो महात्मा का अनुसरण करनेवाले लाखों-लाखों शिष्य भी परहित में लगे हैं इस बात की मुझे प्रसन्नता है। कइयों ने अखंड रामधुन रखी है तो कइयों ने पाठ रखा है, भोजन-भजन, आरती-पूजा... जो, जिसको, जहाँ, जैसी-जैसी अनुकूलता पड़ी है... हजारों-हजारों जगहों पर इस जन्मदिवस के निमित्त अपने जन्म और कर्म को दिव्य बनाने का अवसर जिन साधकों को मिल रहा है उनको मैं बधाई देता हूँ। 'बापू! आपको जन्मदिवस की बधाई है।' बापू के जन्मदिवस की बधाई बापू स्वीकार नहीं करते लेकिन बापू के जन्मदिवस की बधाई के निमित्त मेरे लाखों-लाखों साधकों का जन्म हो रहा है दिव्य और कर्म हो रहे हैं दिव्य! ❐

दादू पलक मांहिं प्रकटै सही, जे जन करैं पुकार।
दीन दुखी तब देखकर, अति आतुर तिहिं बार॥

जब भक्त अत्यंत व्याकुल होकर भगवद्-दर्शनार्थ प्रार्थना करता है, तब उसे दीन-दुखित देखकर भगवान उसी समय एक क्षण में ही दर्शन द्वारा उसकी रक्षा करने के लिए अवश्य प्रकट हो जाते हैं।

सेवक की रक्षा करै, सेवक की प्रतिपाल।
सेवक की वाहरै चढ़ै, दादू दीन दयाल॥

भगवान अपने भक्त की कामादि विकारों से रक्षा करते हैं, भोजनादि द्वारा पालन-पोषण करते हैं और दुष्टों से बचाने के लिए सदा सहायक होते रहते हैं। **- संत दादूजी**

पलटू ऐसी प्रीति कर, ज्यों मजीठ को रंग।
टूक टूक कपड़ा उड़ै, रंग न छाड़ै संग॥

- संत पलटूदासजी

चार खानि[1] में भरमता, कबहुं न लहता पार।
सो तो फेरा मिटि गया, सतगुरु के उपकार॥

सतगुरु मारा बान भरि, निरखि निरखि निज ठौर।
अलख नाम में रमि रहा, चित न आवै और॥

सतगुरु तोहि बिसारि कै, का के सरनै जायँ।
सिव बिरंचि[2] मुनि नारदा, हिरदे नाहिं समायँ॥

साचे गुरु की पच्छ में, मन को दे ठहराय।
चंचल तें निहचल भया, नहिं आवै नहिं जाय॥

गुरु मिला तब जानिये, मिटै मोह तन ताप।
हर्ष सोक व्यापै नहीं, तब गुरु आपै आप॥

मथुरा भावै द्वारिका, भावै जा जगन्नाथ।
साध संगति हरि भजन बिनु, कछू न आवै हाथ॥

- संत कबीरजी

१. अण्डज, स्वेदज, उद्भिज्ज व जरायुज चार प्रकार की योनियाँ २. ब्रह्माजी

कामदा एकादशी

(१४ अप्रैल २०११)

धर्मराज युधिष्ठिर ने पूछा : वासुदेव ! आपको नमस्कार है । कृपया आप यह बताइये कि चैत्र शुक्ल पक्ष में किस नाम की एकादशी होती है ?

भगवान श्रीकृष्ण बोले : राजन् ! एकाग्रचित्त होकर यह पुरातन कथा सुनो, जो वसिष्ठजी ने राजा दिलीप के पूछने पर कही थी ।

दिलीप ने पूछा : भगवन् ! मैं एक बात सुनना चाहता हूँ - चैत्र मास के शुक्ल पक्ष में किस नाम की एकादशी होती है ?

वसिष्ठजी बोले : राजन् ! चैत्र शुक्ल पक्ष में 'कामदा' नाम की एकादशी होती है । वह परम पुण्यमयी है । पापरूपी ईंधन के लिए तो वह दावानल ही है ।

प्राचीनकाल की बात है । नागपुर नाम का एक सुंदर नगर था, जहाँ सोने के महल बने हुए थे । उस नगर में पुण्डरीक आदि महा भयंकर नाग निवास करते थे । पुण्डरीक नाम का नाग उन दिनों वहाँ राज्य करता था । गंधर्व, किन्नर और अप्सराएँ भी उस नगर का सेवन करती थीं । वहाँ एक श्रेष्ठ अप्सरा थी, जिसका नाम ललिता था । उसके साथ ललित नामवाला गंधर्व भी था । वे दोनों पति-पत्नी के रूप में रहते थे । दोनों ही परस्पर काम से पीड़ित रहा करते थे । ललिता के हृदय में सदा पति की ही मूर्ति बसी रहती थी और ललित के हृदय में सुंदरी ललिता का नित्य निवास था ।

एक दिन की बात है, नागराज पुण्डरीक राजसभा में बैठकर मनोरंजन कर रहा था । उस समय ललित का गान हो रहा था किंतु उसके साथ उसकी प्यारी ललिता नहीं थी । गाते-गाते उसे ललिता का स्मरण हो आया । अतः उसके पैरों की गति रुक गयी और जीभ लड़खड़ाने लगी ।

नागों में श्रेष्ठ कर्कोटक को ललित के मन का संताप ज्ञात हो गया । अतः उसने राजा पुण्डरीक को उसके पैरों की गति रुकने और गान में त्रुटि होने की बात बता दी । कर्कोटक की बात सुनकर नागराज पुण्डरीक की आँखें क्रोध से लाल हो गयीं । उसने गाते हुए कामातुर ललित को शाप दिया : ''दुर्बुद्धे ! तू मेरे सामने गान करते समय भी पत्नी के वशीभूत हो गया, इसलिए राक्षस हो जा ।''

महाराज पुण्डरीक के इतना कहते ही वह गंधर्व राक्षस हो गया । भयंकर मुख, विकराल आँखें और देखनेमात्र से भय उपजानेवाला रूप - ऐसा राक्षस होकर वह कर्म का फल भोगने लगा ।

ललिता अपने पति की विकराल आकृति देख मन-ही-मन बहुत चिंतित हुई । भारी दुःख से वह कष्ट पाने लगी । सोचने लगी, 'क्या करूँ ? कहाँ जाऊँ ? मेरे पति पाप से कष्ट पा रहे हैं ।'

वह रोती हुई घने जंगलों में पति के पीछे-पीछे घूमने लगी । वन में उसे एक सुंदर आश्रम दिखाई दिया, जहाँ एक मुनि शांत बैठे हुए थे । किसी भी प्राणी के साथ उनका वैर-विरोध नहीं था । ललिता शीघ्रता के साथ वहाँ गयी और मुनि को प्रणाम करके उनके सामने खड़ी हो गयी । मुनि बड़े दयालु थे । उस दुखिया को देखकर वे इस प्रकार बोले : ''शुभे ! तुम कौन हो ? कहाँ से आयी हो ? मेरे सामने सच-सच बताओ ।''

ललिता ने कहा : ''महामुने ! वीरधन्वा नामवाले एक गंधर्व हैं, मैं उन्हीं महात्मा की पुत्री हूँ । मेरा नाम ललिता है । मेरे स्वामी अपने पाप-

दोष के कारण राक्षस हो गये हैं । उनकी यह अवस्था देखकर मुझे चैन नहीं है । ब्रह्मन् ! इस समय मेरा जो कर्तव्य हो, वह बताइये । विप्रवर ! जिस पुण्य के द्वारा मेरे पति राक्षसभाव से छुटकारा पा जायें, उसका उपदेश कीजिये ।''

ऋषि बोले : ''भद्रे ! इस समय चैत्र मास के शुक्ल पक्ष की 'कामदा' नामक एकादशी तिथि है, जो सब पापों को हरनेवाली और उत्तम है । तुम उसीका विधिपूर्वक व्रत करो और उस व्रत का जो पुण्य हो, उसे अपने स्वामी को दे डालो । पुण्य देने पर क्षण भर में ही शाप का दोष दूर हो जायेगा ।''

राजन् ! मुनि का यह वचन सुनकर ललिता को बड़ा हर्ष हुआ । उसने एकादशी को उपवास करके द्वादशी के दिन उन ब्रह्मर्षि के समीप ही भगवान वासुदेव के (श्रीविग्रह के) समक्ष अपने पति के उद्धार के लिए यह वचन कहा : ''मैंने जो यह 'कामदा एकादशी' का उपवास-व्रत किया है, उसके पुण्य के प्रभाव से मेरे पति का राक्षसभाव दूर हो जाय ।''

वसिष्ठजी कहते हैं : ललिता के इतना कहते ही उसी क्षण ललित का पाप दूर हो गया । उसका राक्षसभाव चला गया और उसने दिव्य देह धारण कर ली । उसे पुनः गंधर्वत्व की प्राप्ति हुई ।

नृपश्रेष्ठ ! वे दोनों पति-पत्नी 'कामदा' के प्रभाव से पहले की अपेक्षा भी अधिक सुंदर रूप धारण करके विमान पर आरूढ़ होकर अत्यंत शोभा पाने लगे । यह जानकर इस एकादशी के व्रत का यत्नपूर्वक पालन करना चाहिए ।

मैंने लोगों के हित के लिए तुम्हारे सामने इस व्रत के माहात्म्य का वर्णन किया है । 'कामदा एकादशी' ब्रह्महत्या आदि पापों तथा पिशाचत्व आदि दोषों का नाश करनेवाली है । राजन् ! इस माहात्म्य को पढ़ने और सुनने से वाजपेय यज्ञ का फल मिलता है । **('पद्म पुराण' से)** ❑

बताओ तो जानें

(१) जहाँ बने हैं गंगा और
भगीरथ मंदिर सुंदर ।
कहो, कहाँ से बहती गंगा
बन विशालतम निर्झर ?

(२) गोरख प्यारा राष्ट्र हिमगिरि पर
उसका राज-केन्द्र है शोभित।
कहो, कौन एक नगर मनोहर
ईश-लिंग है जहाँ अवस्थित ?

(३) प्रकृति के उस हरित अंचल में
केरल का वह तीर्थ अवस्थित ।
प्रेममयी शबरी की यादें,
कहो कहाँ हैं अंकित ?

पिछले अंक की पहेलियों के उत्तर :
(१) नासिक (२) कैलास (३) पाटलिपुत्र (पटना)

तुम हो अपने चरित्र के विधाता !

- ब्रह्मलीन स्वामी श्री शिवानंदजी सरस्वती

यदि जीवन में सफलता की कामना है, आध्यात्मिक मार्ग पर बढ़ने की अभिलाषा है और आत्मज्ञान प्राप्त करने की लगन है तो निष्कलंक चरित्र का उपार्जन करो । मनुष्य-जीवन का सारांश है - चरित्र । मनुष्य का चरित्रमात्र ही सदा जीवित रहता है और मनुष्य को जीवित रखता है ।

मनुष्य का शरीरांत होने पर भी उसका चरित्र बना रहता है, उसके विचार भी बने रहते हैं । चरित्र ही मनुष्य में वास्तविक शक्ति और शौर्य का स्फुरण भरता है । चरित्र शक्ति का ही पर्याय है । चरित्र का अर्जन नहीं किया गया तो ज्ञान का अर्जन भी नहीं किया जा सकता । चरित्रहीन व्यक्ति और जीवनहीन मुर्दे में कुछ भी अंतर नहीं है । समाज के लिए वह घृणास्पद है, समाज के लिए वह कल्मष है ।

अपने अलौकिक चरित्र के कारण ही आज अनेकों शताब्दियों के बीत जाने पर भी आद्य शंकराचार्यजी तथा अन्य ऋषि हमें याद आते हैं । अपने चरित्र के कारण ही वे जनता के विचारों को प्रभावित कर सके और चरित्र-शक्ति के आधार पर ही जनसमाज की विचारधाराओं का निर्माण भी कर पाये ।

चरित्र और धन की तुलना हो ही नहीं सकती । कहाँ चरित्र एक शक्तिशाली उपकरण, सुरभिपूर्ण सुंदर पुष्प और कहाँ धन एक चंचल वस्तु और कलह का आदिमूल । महान विचारवाले तथा उज्ज्वल चरित्रशाली व्यक्ति का ओज प्रभावशाली होता है । व्यक्तित्व का निर्माण चरित्र से ही होता है । कितना ही सुंदर कलाकार क्यों न हो, कितना ही निपुण गायक क्यों न हो और कवि या वैज्ञानिक ही क्यों न हो, पर चरित्र न हुआ तो समाज में उसके लिए सम्मान्य स्थान का सदा अभाव ही रहता है । जनसमाज उसकी अवहेलना ही करेगा ।

'चरित्र' व्यापक शब्द है । साधारणतः चरित्र का अर्थ होता है नैतिक सदाचार । जब हम कहते हैं कि अमुक व्यक्ति चरित्रवान है तो हमारा अर्थ होता है कि वह नैतिक सदाचारशील है । चरित्र का व्यापक अर्थ लिया जाय तो वह व्यक्ति की दयालुता, कृपालुता, सत्यप्रियता, उदारता, क्षमाशीलता और सहिष्णुता का द्योतक होता है । चरित्रवान व्यक्ति में सभी दैवी गुणों का समावेश रहता है । नैतिक दृष्टिकोण से तो वह सिद्ध होगा ही, साथ-साथ दैवी गुणों का विकास भी उसमें पूर्णतया होना चाहिए ।

जानबूझकर असत्य भाषण करना, स्वार्थी और लोलुप होना, दूसरों के दिल को चोट पहुँचाना - इन सबसे मनुष्य के दुश्चरित्र का बोध होता है । अपने चरित्र का विकास करने के लिए व्यक्ति को सर्वांगीण उन्नति करनी होगी । चरित्र के विकास के लिए गीता के १२वें और १६वें अध्याय में बतलाये गये दैवी गुणों की साधना करनी होगी, तभी वह सिद्ध व्यक्ति बन सकता है । ऐसे ही व्यक्ति को निष्कलंक चरित्रशील कहा जाता है ।

निष्कलंक चरित्र का निर्माण करने के लिए ये गुण उपार्जित किये जाने चाहिए :

नम्रता, निष्कपटता, अहिंसा, क्षमाशीलता, गुरुसेवा, शुद्धि (पवित्रता), सत्यशीलता,

आत्मसंयम, विषयों के प्रति अनासक्ति, निरहंकारिता; जन्म, मृत्यु, जरा, रोग आदि में दुःख एवं दोषों का बार-बार विचार करना, निर्भयता, स्वच्छता, दानशीलता, शास्त्रवादिता, तपस्या, सरल व्यवहारशीलता, क्रोधहीनता, त्यागपरायणता, शांति, कूटनीति का अभाव, जीवदया, अलोलुपता, सौजन्य, सरल जीवन से प्रेम, क्षुद्र स्वभाव का दमन, वीर्य, शौर्य और दम तथा घृणा, प्रतिहिंसा का अभाव।

कार्य करते रहने पर एक प्रकार की आदत उदय होती है। अच्छी आदतों का बीज बो देने से चरित्र का उदय होता है। चरित्र का बीज बो देने से भाग्य का उदय होता है। चित्त में विचार, अनुभव और कर्म - इनके संस्कार मुद्रित हो जाते हैं। व्यक्ति के मर जाने पर भी ये विचार जीवित और सक्रिय रहते हैं। इनके ही कारण मनुष्य बार-बार जन्म लेता है। विचार और कर्मजन्य संस्कार मिलकर आदत का विकास करते हैं। अच्छी आदतों का संगठन होने से चरित्र का विकास होता है। व्यक्ति ही इन विचारों और आदतों का विधाता है। आज जिस अवस्था में व्यक्ति को देखते हो, वह भूतकाल का ही परिणाम है। यह आदत का उत्तररूप है। प्रत्येक व्यक्ति विचारों और कार्यों पर नियंत्रण स्थापित कर आदतों का मनोनुकूल निर्माण कर सकता है।

दुश्चरित्र व्यक्ति सदा के लिए दुश्चरित्र ही रहता है, यह उचित तर्क नहीं है। उसे संतों के सम्पर्क में रहने का अवसर दो। उसके जीवन में परिवर्तन खिल उठेगा, उसमें दिव्य गुण जाग उठेंगे। जगाई और मधाई, जिन्होंने चैतन्य महाप्रभु के शिष्य नित्यानंदजी पर पत्थर मारे थे, बाद में चैतन्यदेव एवं नित्यानंदजी की कृपा से महान भक्त बन गये। इन व्यक्तियों के मानसिक रूप, आदर्श और विचारों में समूल परिवर्तन हो गया था। इनकी आदतें सर्वथा बदल गयी थीं।

अपने बुरे चरित्र और विचारों को बदलने की शक्ति प्रत्येक व्यक्ति में सुरक्षित है, वर्तमान है। यदि बुरे विचारों और बुरी आदतों के बदले अच्छे विचारों और अच्छी आदतों का अभ्यास कराया जाय तो व्यक्ति को दिव्य गुणों से परिपूर्ण किया जा सकता है। दुश्चरित्र सच्चरित्र ही क्या, संत भी बन सकता है!

व्यक्ति की आदतों, गुणों और आचार (चरित्र) को प्रतिपक्ष-भावना की विधि से बदला जा सकता है। भय और असत्य को जीतने के लिए प्रतिपक्षीय भावना है-साहस और सत्यवादिता। ब्रह्मचर्य और संतोष का विचार करो तो काम-वासना और लोभ का पराभव किया जा सकेगा। प्रतिपक्षीय भावना द्वारा अपनी दुश्चरित्रता का दमन करना चाहिए, यह वैज्ञानिक विधान है।

संकल्प, रुचि, ध्यान और श्रद्धा के द्वारा स्वभाव-परिवर्तन या चरित्र-निर्माण किया जा सकता है। मनुष्य अपनी पुरानी क्षुद्र आदतों को त्यागकर नवीन सुंदर आदतों को ग्रहण कर ले। त्याग की भावना से किया गया कर्मयोग का अभ्यास भी मन में सुंदर आदतों का प्रतिष्ठापन करता है। भक्ति, उपासना और विचार के अभ्यास से भी पुरानी आदतों को हटाया जा सकता है।

यदि तुम्हें चरित्र-निर्माण में कठिनाई मालूम होती है तो संतों और महात्माओं के सम्पर्क में रहो। महात्माओं के सम्पर्क में रहने से उनकी आध्यात्मिक विचारधारा तुम्हारे जीवन में अद्भुत परिवर्तन का श्रीगणेश करेगी।

अपने चरित्र का निर्माण करो। चरित्र-निर्माण से ही जीवन में सच्ची सफलता मिल सकती है। प्रतिदिन अपनी बुरी आदतों को हटाने का यत्न करते रहो। प्रतिदिन सत्कर्म करने का अभ्यास करो। सच्चरित्रता मनुष्य-जीवन का प्राण है, उसके बिना मनुष्य मृतक के समान है। ❑

आत्मदृष्टि का दिव्य अंजन

(पूज्य बापूजी की पावन अमृतवाणी)

वृंदावन में एक मस्त संत रहते थे । बड़े मधुर... सर्वत्र आत्मदृष्टि रखकर विचरते थे । किसी दुष्ट आदमी ने किसीके बहकावे में आकर, कुछ रुपयों के लालच में फँसकर भाँग का नशा करके, इन संत-भगवंत के सिर में डण्डा दे मारा और पलायन हो गया । सिर से रक्त की धार बह चली । संत बेसुध हो गये । उनकी यह हालत देखकर सज्जन पुरुषों का हृदय काँप उठा । उन्होंने संतश्री को अस्पताल पहुँचा दिया और अपना कर्तव्य पूरा करके वे रवाना हो गये । वे तो रास्ते के पथिक थे ।

अस्पताल में कुछ समय के बाद बाबाजी होश में आये । देखा तो अस्पताल का कोई अधिकारी दूध का गिलास लिये सेवा में खड़ा था । बोला : ''बाबाजी ! दूध पीजिये ।''

बाबाजी मुस्कराये । उसको देखते हुए मधुरता से बोले : ''यार ! कभी तो डण्डा मारता है और कभी दूध पिलाता है !''

अधिकारी चौंका । कहने लगा : ''नहीं-नहीं स्वामीजी ! मैंने डण्डा नहीं मारा ।''

''तू हजार कसमें खा लेकिन मैं पहचान गया तुझे यार ! एक तरफ डण्डा मारता है, दूसरी तरफ मलहम-पट्टी करता है, तीसरी तरफ दूध पिला रहा है । बड़ी अद्भुत लीला है तेरी ! बड़ी चालाकी करता है तू !''

''स्वामीजी ! स्वामीजी ! मैं सच कहता हूँ, मैंने डण्डा नहीं मारा ! मैं तो... मैं तो...'' अधिकारी हैरान हो रहा था ।

''अरे ! तूने कैसे नहीं मारा ! तू ही तो था ।''

वह घबड़ाया । बोला : ''स्वामीजी ! मैं तो अस्पताल का कर्मचारी हूँ और आपका प्रशंसक हूँ... भक्त हूँ ।''

बाबाजी हँसते हुए बोले : ''क्या खाक तू अस्पताल का कर्मचारी है ! तू वही है । कर्मचारी तू बना बैठा है, डण्डा मारनेवाला भी तू बना बैठा है, मलहम-पट्टी करनेवाला भी तू बना बैठा है और दूध पिलानेवाला भी तू बना बैठा है । मैं तुझे पहचान गया । तू मुझे धोखा नहीं दे सकता ।'' बाबाजी आत्ममस्ती में सराबोर होने लगे ।

अब उस अधिकारी को ख्याल आया कि बाबाजी शुद्ध आत्मदृष्टि से ही यह सब बोल रहे हैं ।

देह सभी मिथ्या हुई जगत हुआ निस्सार ।
हुआ आत्मा से तभी अपना साक्षात्कार ॥

जीव को जब आत्मदृष्टि प्राप्त हो जाती है, तब अनेकों में खेलते हुए 'एक' को पहचान लेता है ।

इसका मतलब यह नहीं कि सर्वत्र आत्मदृष्टि से निहारनेवाला मूर्ख होकर रहता है, बुद्धू होकर रहता है, पलायनवादी होकर रहता है । नहीं, बुद्धू, मूर्ख या पलायनवादी नहीं होना है । जो कार्य करो, पूरी कुशलता से करो ।

'योगः कर्मसु कौशलम् ।'

किसी भी कार्य से अपना और दूसरों का अहित न हो । कर्म ऐसे करो कि कर्म करते-करते कर्तापने का बाध हो जाय, जिससे कर्म करने की सत्ता आती है उस सत्य का साक्षात्कार हो जाय ।

आपने कितना अच्छा कार्य किया इस पर ध्यान मत दो लेकिन इससे भी बढ़िया कार्य कर

सकते हो कि नहीं, ऐसी उत्तुंग और विकासशील दृष्टि रखो। विकास अंधकार की ओर नहीं बल्कि प्रकाश की ओर हो । 'मैंने इतनी रिश्वत ली, इससे ज्यादा भी ले सकता हूँ कि नहीं ?' - ऐसा दुष्ट विचार नहीं करना ।

आपने किसी कारण से लोभ में आकर किसीका अहित कर दिया, हजारों लोगों की सात्त्विक श्रद्धा को ठेस पहुँचा दी तो पाप के पोटले बँध जायेंगे। हजारों जन्म भोगने के बाद भी इसका बदला चुकाना मुश्किल हो जायेगा ।

यह मानव-जन्म कर्मभूमि है। यहाँ से अनंत जन्मों में ले जानेवाले संस्कार इकट्ठे कर सकते हो और अनंत जन्मों में भटकानेवाले बेईमान मन को आत्मदृष्टि का अंजन लगाकर उस मालिक के अमृत से परितृप्त करके आत्मसाक्षात्कारी भी बन सकते हो। मर्जी तुम्हारी...

यथेच्छसि तथा कुरु ।

(आश्रम से प्रकाशित पुस्तक 'जीवन विकास' से)

भारतीय संस्कृति के आधारभूत तथ्य

सप्त वार : सोम, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, रवि ।

सप्त धातु : रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा, शुक्र ।

सप्त रंग : लाल, नारंगी, पीला, हरा, आसमानी, नीला, बैंगनी ।

सप्त स्वर : सा, रे, ग, म, प, ध, नि ।

सप्त धान्य : गेहूँ, जौ, चावल, चना, मूँग, उड़द और तिल ।

सप्तर्षि : अंगिरा, वसिष्ठ, क्रतु, भृगु, मरीचि, पुलह, पुलस्त्य ।

सप्त चक्र : मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्धाख्य, आज्ञा और सहस्रार ।

मोक्षदायिनी सप्त पुरियाँ : अयोध्या, मथुरा, हरिद्वार, काशी, कांची, उज्जैन और द्वारिका ।

सप्त ज्ञान-भूमिकाएँ : शुभेच्छा, विचारणा, तनुमानसा, सत्त्वापत्ति, असंसक्ति, पदार्थाभाविनी, तुर्यगा ।

सच्ची शरणागति

एक संत कहीं जा रहे थे । रास्ते में कड़ाके की भूख लगी । गाँव बहुत दूर था । उनका मन कहने लगा : 'प्रभु विश्व के पालनकर्ता हैं। उनसे भोजन माँग लो । वे कैसे भी करके अपने प्यारे भक्त को भोजन देंगे ।'

संत ने अपने मन को समझाया : 'अरे ! मैं प्रभु का अनन्य भक्त होकर प्रभु में अविश्वास करूँ ! प्रभु को पता नहीं है कि मुझे भूख लगी है ! प्यारे प्रभु से माँगना विश्वासी भक्त का काम नहीं है ।'

संत ने इस प्रकार मन को समझा दिया। मन की कुचाल विफल हो गयी । तब वह दूसरी चाल चला । मन ने कहा : 'अच्छी बात है । तुम खाना मत माँगो लेकिन भूखे कब तक रह सकोगे ! भूख सहन करने का धीरज तो माँग लो ।'

संत ने सोचा, 'यह ठीक है । भोजन न सही लेकिन धीरज माँगने में कोई हर्ज नहीं ।'

इतने में ही उनके शुद्ध अंतःकरण में भगवान की दिव्य वाणी सुनायी दी : ''धीरज का समुद्र मैं सदा तेरे साथ ही हूँ न ! मुझे स्वीकार न करके धीरज माँगने चला है ! अपने श्रद्धा-विश्वास को क्यों खो रहा है ? क्या बिना माँगे मैं नहीं देता ? अनन्य भक्त के योगक्षेम का सारा भार उठाने की तो मैंने घोषणा कर रखी है !''

संत के हृदय में समाधान हो गया । भाव से गद्‌गद होते हुए कहा : ''सच है प्रभो ! मैं मन के भुलावे में आ गया था। मैं भूला था नाथ ! भूला था ।''

मैं भूलनेवाला कौन हूँ यह खोजूँ। खोजने बैठा तो जगन्नियंता, सर्वान्तर्यामी प्रभु-ही-प्रभु को पाया। मन की क्षुद्र इच्छाएँ, वासनाएँ ही आज तक मुझे तुझसे दूर कर रही थीं। मैं उन्हें सत्ता देता था तभी वे मुझे दबाये हुए नचा रही थीं। तेरे-मेरे शाश्वत संबंध की जब तक मुझे विस्मृति थी तब तक मैं इनके चंगुल में था।'' - ऐसा सोचते-सोचते संत अपने परमानंदस्वरूप में डूब गये ।

(आश्रम से प्रकाशित पुस्तक 'जीवन विकास' से क्रमशः) ❑

अनन्य निष्ठा का संदेश देते हैं हनुमानजी

(हनुमान जयंती : १८ अप्रैल २०११)

स्वयं प्रभु श्रीराम जिनके ऋणी बन गये, जिनके प्रेम के वशीभूत हो गये और सीताजी भी जिनसे उऋण न हो सकीं, उन अंजनिपुत्र हनुमानजी की रामभक्ति का वर्णन नहीं किया जा सकता । लंकादाह के बाद वापस आने पर उनके लिए प्रभु श्रीराम को स्वयं कहना पड़ा : ''हे हनुमान ! तुमने विदेहराजनंदिनी सीता का पता लगा के उनका दर्शन कर और उनका शुभ समाचार सुनाकर समस्त रघुवंश की तथा महाबली लक्ष्मण की और मेरी भी आज धर्मपूर्वक रक्षा कर ली। परंतु ऐसे प्यारे संवाद देनेवाले हनुमानजी का इस कार्य के योग्य हम कुछ भी प्रिय नहीं कर सकते। यही बात हमारे अंतःकरण में खेद उत्पन्न कर रही है । जो हो, इस समय हमारा हृदय से आलिंगनपूर्वक मिलना ही सर्वस्वदान-स्वरूप महात्मा श्रीहनुमानजी का कार्य के योग्य पुरस्कार होवे ।''

(वाल्मीकि रामायण : ६.१.११-१३)

श्रीराम-राज्याभिषेक के बाद जब जानकीजी ने हनुमानजी को एक दिव्य रत्नों का हार प्रसन्नतापूर्वक प्रदान किया तब वे उसमें राम-नाम को ढूँढ़ने लगे। तब प्रभु श्रीराम ने हनुमानजी से पूछा : ''हनुमान ! क्या तुमको हमसे भी हमारा नाम अधिक प्यारा है ?'' इस पर हनुमानजी ने तुरंत उत्तर दिया : ''प्रभो ! आपसे तो आपका नाम बहुत ही श्रेष्ठ है, ऐसा मैं बुद्धि से निश्चयपूर्वक कहता हूँ। आपने तो अयोध्यावासियों को तारा है परंतु आपका नाम तो सदा-सर्वदा तीनों भुवनों को तारता ही रहता है ।''

यह है ज्ञानियों में अग्रगण्य हनुमानजी की भगवन्नाम-निष्ठा ! हनुमानजी ने यहाँ दुःख, शोक, चिंता, संताप के सागर इस संसार से तरने के लिए सबसे सरल एवं सबसे सुगम साधन के रूप में भगवन्नाम का, भगवन्नामयुक्त इष्टमंत्र का स्मरण किया है, इष्टस्वरूप का ज्ञान और उसके साथ साक्षात्कार यह सार समझाया है ।

श्री हनुमानजी का यह उपदेश सदैव स्मरण में रखने योग्य है : 'स्मरण रहे, लौकिक क्षुद्र कामना की पूर्ति के लिए सर्वदा मोक्षसाधक, परम कल्याणप्रदायक श्रीराम-मंत्र का आश्रय भूलकर भी नहीं लेना चाहिए। श्रीरामकृपा से मेरे द्वारा ही अभिवांछित फल की प्राप्ति हो जायेगी । कोई भी सांसारिक काम अटक जाय तो मुझ श्रीराम-सेवक का स्मरण करना चाहिए।' **(रामरहस्योपनिषद् : ४.११)**

हनुमानजी यह नहीं चाहते कि उनके रहते हुए उनके स्वामी को भक्तों का दुःख देखना पड़े । यदि कोई उनकी उपेक्षा कर श्रीरामचन्द्रजी को क्षुद्र कामना के लिए पुकारता है तो उन्हें बड़ी वेदना होती है ।

एक बार भगवान श्रीराम ने हनुमानजी से कहा : ''हनुमान ! यदि तुम मुझसे कुछ माँगते तो मेरे मन को बहुत संतोष होता । आज तो हमसे कुछ अवश्य माँग लो ।'' तब हनुमानजी ने हाथ जोड़कर प्रार्थना की :

''स्नेहो मे परमो राजंस्त्वयि तिष्ठतु नित्यदा ।
भक्तिश्च नियता वीर भावो नान्यत्र गच्छतु ॥

श्रीराजराजेन्द्र प्रभो ! मेरा परम स्नेह नित्य ही आपके श्रीपाद-पद्मों में प्रतिष्ठित रहे। हे श्रीरघुवीर ! आपमें ही मेरी अविचल भक्ति बनी रहे । आपके अतिरिक्त और कहीं मेरा आंतरिक अनुराग न हो । कृपया यही वरदान दें।'' **(वाल्मीकि रामायण : ७.४०.१६)**

अपने परम कल्याण के इच्छुक हर भक्त को अपने इष्ट से प्रार्थना में ऐसा ही वरदान माँगना चाहिए । ऐसी अनन्य भक्ति रखनेवाले के लिए फिर तीनों लोकों में क्या अप्राप्य रहेगा ! हनुमानजी के लिए ऋद्धि-सिद्धि, आत्मबोध - कौन-सी बात अप्राप्य रही !

अपनी अनन्य निष्ठा को एक अन्य प्रसंग में हनुमानजी ने और अधिक स्पष्ट रूप से व्यक्त किया है : ''श्रीराम-पादारविंदों को त्यागकर यदि मेरा मस्तक किसी अन्य के चरणों में झुके तो मेरे सिर पर प्रचण्ड कालदण्ड का तत्काल प्रहार हो । मेरी जीभ श्रीराम-नाम के अतिरिक्त यदि अन्य मंत्रों का जप करे तो दो जीभवाला काला भुजंग उसे डँस ले । मेरा हृदय श्रीराघवेन्द्र प्रभु को भूलकर यदि अन्य किसीका चिंतन करे तो भयंकर वज्र उसके टुकड़े-टुकड़े कर डाले । मैं यह सत्य कहता हूँ अथवा यह औपचारिक चाटुकारितामात्र ही है, इस बात को सर्वान्तर्यामी आप तो पूर्णरूप से जानते ही हैं, अन्य कोई जाने अथवा न जाने ।''

यह है श्री हनुमानजी की अनन्य श्रीराम-निष्ठा ! हर भक्त की, सद्गुरु के शिष्य की भी अपने इष्ट के प्रति ऐसी ही अनन्य निष्ठा होनी चाहिए ।

'प्रभु चरित्र सुनिबे को रसिया' होने के नाते आपने प्रभु से यह याचना की : ''हे रघुवीर ! जब तक श्रीरामकथा इस भूतल को पावन करती रहे, तब तक निस्संदेह (भगवत्कथा-श्रवण करने के लिए) मेरे प्राण इस शरीर में ही निवास करें ।''

(वाल्मीकि रामायण : ७.४०.१७)

इसी कारण जहाँ-जहाँ श्रीरामकथा होती है, वहाँ-वहाँ हनुमानजी नेत्रों में प्रेमाश्रु भरे तथा ललाट से बद्धांजलि लगाये उपस्थित रहते हैं । हनुमानजी हमें भी यह संदेश देते हैं कि मनुष्य-जीवन में भगवत्प्रीति बढ़ानेवाली भगवद्लीलाओं एवं भगवद्ज्ञान का श्रवण परमानंदप्राप्ति का मधुर साधन है । हम सभी इससे परितृप्त रहकर मनुष्य-जीवन का अमृत प्राप्त करें । ❐

जीने-मरने की कला

(आत्मनिष्ठ बापूजी के मुखारविंद से निःसृत ज्ञानगंगा)

(गतांक से आगे)

दूसरों के प्रति बाहर का व्यवहार करते समय तो सावधानी रखनी ही चाहिए तथा साथ-साथ अपने भीतर को भी सँवारना चाहिए । जितनी भीतर की समझ ठीक होगी उतना ही बाहर का व्यवहार अपने-आप ठीक होता जायेगा, सुधरता जायेगा । प्रकृति का नियम है 'उन्नति' । आदमी अपने-आप नहीं सुधरता है तो मार खाकर भी, डंडे खाकर भी सुधरना पड़ता है । चाहे फिर नरक में डालकर या अन्य योनियों में डालकर भी सुधारने की प्रक्रिया जारी रहती है । आगे बढ़ो, आगे बढ़ो, नहीं तो मरो, मरो और मरो ! फिर हम प्रकृति के नियम के अनुकूल ही क्यों न चलें ! अपने आपको उन्नत बनाने के बजाय नरकों में क्यों ले जायें !

आप पहली कक्षा में पढ़ते हो तब तो ठीक है लेकिन आप फिर-फिर से पहली ही कक्षा में रहते हो तो प्रकृति के नियम का उल्लंघन होता है । अगर कोई बच्चा आठवीं कक्षा में है और आठवीं की किताबें पढ़ता है तो स्कूल के नियमानुसार ठीक है किंतु अगर वह आठवीं की

किताब छोड़कर पहली की किताब पढ़ने बैठ जाय या आठवीं की छोड़कर बारहवीं की या पीएच.डी. की किताब पढ़ने की इच्छा करे तो वह गलत है, अनुचित है। आप जिस अवस्था में हो उसी अवस्था में उचित व्यवहार करके उन्नत होते जाओ। आप जिस अवस्था में हो उस अवस्था को छोड़कर दूसरी को पाने की चेष्टा में लग जाते हो तो दुःख पाते हो। जिस वक्त जो मिल जाय उसे ईश्वर की प्रसन्नता के निमित्त किया जाय तो आप आसानी से उन्नत होते जाओगे।

किंतु... घर का काम मिला है तो उससे ऊबकर नौकरी करने की सोचते हो। नौकरी के समय फिल्म देखने की इच्छा रखते हो। फिल्म देखते वक्त घर का चिंतन करते हो। घर में होते हो तब कहीं और का चिंतन चलता रहता है, इससे गड़बड़ पैदा होती है।

भोजन बनाना है तो बड़े चाव से बनाओ। 'मैं अपने पति के रूप में, बाल-बच्चों के रूप में, भाई-बहन, माता-पिता या अतिथि किसीके भी रूप में साक्षात् नारायण को जिमाऊँगी...'- इस भाव से स्त्री यदि भोजन बनाये तो उसका भोजन बनाना भी पूजा हो जायेगा। झाडू लगानी है तो भी बड़े चाव से लगाओ, नौकरी-धंधा करते हो तो भी बड़े चाव से करो लेकिन ऐसा नहीं कि दिन भर झाडू ही लगाते रहो, भोजन ही बनाते रहो, घर सँभालते रहो या जीवन भर नौकरी-धंधा करते रहो। कूप-मंडूक बने रहो या चूहे की नाईं घर में पड़े रहो। ऐसा भी नहीं होना चाहिए। घर भी सँभालो, नौकरी-धंधा भी सँभालो पर इनसे समय बचाकर जप-ध्यान भी करो, सत्संग भी सुनो, साधना भी करो। अपने आत्मदेव को सँभालो और वह ऐसा सँभालो कि बाकी सब सँभाला हुआ छोड़ना पड़े तो भी फिक्र न हो। जिस वक्त जो छोड़ना पड़े उसके लिए तैयार रहो। इसे कहते हैं 'अनासक्तियोग।'

जीवन में त्याग का सामर्थ्य होना चाहिए। जिनके पास त्यागने की शक्ति है वे ही भोग भोग सकते हैं। जिनके पास भोग त्यागने की शक्ति नहीं है वे भोग भी नहीं सकते हैं। धन मिला है तो धन को सत्कर्म में लगाने का, धन को त्यागने का सामर्थ्य होना चाहिए। सत्ता पाने की इच्छा है और नहीं मिलती है तो दुःख होता है लेकिन जिनके पास सत्ता है, वे सत्ता के त्याग का सामर्थ्य रखते हैं तभी सत्ता को भोग सकते हैं। त्यागने का सामर्थ्य होना चाहिए। यहाँ तक कि शरीर त्यागने का भी सामर्थ्य होना चाहिए। जब मृत्यु आये तब हिचकिचाहट करके शरीर में बैठे नहीं रहें बल्कि 'चलो, मृत्यु आयी है। यह शरीररूपी चोला बदलता रहता है। हम तो वही हैं - सोऽहं... शिवोऽहं...'- ऐसा करके जो जीता है, वही आदमी जीने का भी मजा लेता है और मरने का भी मजा लेता है।

आप भी मजे से जीना और मरना चाहते हो, इस जीवन में सुखी होना चाहते हो और मरने के बाद भी सुखी होना चाहते हो तो कृपा करके जीवन जीने की कला सीख लो और मरने की भी कला सीख लो।

आपको एक गाँव से दूसरे गाँव जाना पड़ता है तो थोड़ा सामान बाँध लेते हो, थोड़ी-बहुत तैयारी कर लेते हो। इस संसार से आपको एक दिन तो जाना ही है अतः उसके लिए भी थोड़ी तैयारी कर लेनी चाहिए। आप सेवा, सत्कर्म, सद्विचार, सत्संग, सत्यस्वरूप परमात्मा के नाम-जप और परमात्मा के ध्यान-चिंतन का सामान बाँध लो, ताकि जब भी जाना पड़े तब बंधनमुक्त होकर जा सको। हे निष्पाप मुक्तात्मा ! अपने मुक्त स्वभाव को जान लो...

(समाप्त) ❑

श्री गुरु-स्तवन

गुरु पीर गुरु औलिया, हरि गुरु एक ही जान ।
पारस तो सोना करे, सद्गुरु आप समान ॥
सद्गुरु ब्रह्मस्वरूप हैं, भवनिधि तारणहार ।
कर्मबंधन से परे, 'साक्षी' सिरजनहार ॥
जय गुरुदेव ज्ञान सुख सागर ।
ब्रह्मस्वरूप हरि नटवर नागर ॥
दिव्य पुरुष, अलख अवतारी ।
भक्तवत्सल की महिमा न्यारी ॥
महँगी मैया का लाल निराला ।
जन-जन के हित का रखवाला ॥
दीनबंधु हैं सदा सहायक ।
अचल अभेद सखा गणनायक ॥
अद्भुत ओज है, छटा निराली ।
आत्मभाव चाल मतवाली ॥
भोग, विषय रस विष सम त्यागा ।
प्रभुप्रेम, ईश्वर अनुरागा ॥
योग, वैराग्य, ध्यान अरु पूजा ।
जप-तप संयम, भाव न दूजा ॥
सरल हृदय सद्गुरु हितकारी ।
बापूजी हैं परम उपकारी ॥
भक्त जनन के प्राण आधारे ।
साधु संत के हैं रखवारे ॥
त्यागी वैरागी हैं योगेश्वर ।
परम पिता सद्गुरु सर्वेश्वर ॥
लक्ष्मीपति हैं दिव्य स्वरूपा ।
करुणामय 'साक्षी' निर्लेपा ॥
हरि गुरु में है भेद न कोई ।
रोम-रोम में राम सनेही ॥
श्रद्धा की थाली सजी, जगमग आतम दीप ।
सुमन भक्तिभाव के, ज्ञान-ध्यान हैं धूप ॥
अबीर प्रभु अनुराग का, चंदन हृदय अनूप ।
बसे रहो नैनन सदा, साक्षी दिव्य स्वरूप ॥

– जानकी चंदनानी 'साक्षी'
अहमदाबाद । ❐

'स्वाध्याय'

नीचे दिये गये रिक्त स्थानों के उत्तर खोजने के लिए इस अंक को ध्यानपूर्वक पढ़िये। उत्तर अगले अंक में प्रकाशित किये जायेंगे ।

१. जितनी .... ठीक होगी उतना ही बाहर का व्यवहार अपने-आप ठीक होता जायेगा।

२. जीवन में .... का सामर्थ्य होना चाहिए ।

३. अपने स्वार्थ के लिए कर्म करते हैं तो वह .... हो जाता है, परहित के लिए कर्म करते हैं तो कर्म दिव्य हो जाता है ।

४. मनुष्य-जीवन में भगवत्प्रीति बढ़ानेवाली भगवद्लीलाओं एवं भगवद्ज्ञान का श्रवण .... का मधुर साधन है ।

५. .... मनुष्य-जीवन का प्राण है, उसके बिना मनुष्य मृतक के समान है ।

६. जीव को जब ..... प्राप्त हो जाती है तब अनेकों में खेलते हुए 'एक' को पहचान लेता है ।

७. किसी भी कार्य से अपना और दूसरों का .... न हो ।

८. शिष्य को अपने ..... में दोष नहीं देखने चाहिए ।

पिछले अंक के 'स्वाध्याय' के उत्तर :

१. आत्मज्ञान २. सताकर ३. सुमिरन ४. नाशवान ५. परिस्थितियों ६. श्रद्धा ७. आत्मधन ८. ब्रह्मविद्या ९. नश्वर १०. ब्रह्मचर्य ११. दुःख हरने १२. संत

विशेष सूचना

सूचित किया जाता है कि 'ऋषि प्रसाद' पत्रिका की सदस्यता के नवीनीकरण के समय पुराना सदस्यता क्रमांक/रसीद क्रमांक एवं सदस्यता 'पुरानी' है - ऐसा लिखना अनिवार्य है । सदस्यता की शुरुआत किस माह से करनी है यह भी अवश्य लिखें । जिसकी रसीद में ये नहीं लिखे होंगे, उस सदस्य को नया सदस्य माना जायेगा । आजीवन सदस्यों के अलावा नये सदस्यों की सदस्यता एक माह पूर्व से शुरू की जायेगी तथा सदस्यता के अंतर्गत उन्हें एक पूर्व-प्रकाशित अंक भेजा जायेगा ।

गर्मियों में स्वास्थ्य-रक्षा

ग्रीष्म ऋतु में सूर्य अपनी किरणों द्वारा शरीर के द्रव तथा स्निग्ध अंश का शोषण करता है, जिससे दुर्बलता, अनुत्साह, थकान, बेचैनी आदि उपद्रव उत्पन्न होते हैं। उस समय शीघ्र बल प्राप्त करने के लिए मधुर, स्निग्ध, जलीय, शीत गुणयुक्त सुपाच्य पदार्थों की आवश्यकता होती है। इन दिनों में आहार कम लेकर बार-बार जल पीना हितकर है। परंतु गर्मी से बचने के लिए बाजारू शीत पदार्थ एवं फलों के डिब्बाबंद रस हानिकारक है। उनसे लाभ की जगह हानि ही अधिक होती है। उनकी जगह नींबू का शरबत, आम का पना, जीरे की शिकंजी, ठंडाई, हरे नारियल का पानी, फलों का ताजा रस, दूध आदि शीतल, जलीय पदार्थों का सेवन करें। ग्रीष्म ऋतु में स्वाभाविक उत्पन्न होनेवाली कमजोरी, बेचैनी आदि परेशानियों से बचने के लिए ताजगी देनेवाले कुछ प्रयोग :

१. धनिया पंचक : धनिया, जीरा व सौंफ समभाग मिलाकर कूट लें। इस मिश्रण में दुगनी मात्रा में काली द्राक्ष व मिश्री मिलाकर रखें।

उपयोग : एक चम्मच मिश्रण २०० मि.ली. पानी में भिगोकर रख दें। दो घंटे बाद हाथ से मसलकर छान लें और सेवन करें। इससे आंतरिक गर्मी, हाथ-पैर के तलुवों तथा आँखों की जलन, मूत्रदाह, अम्लपित्त, पित्तजनित शिरःशूल आदि से राहत मिलती है। गुलकंद का उपयोग करने से भी आँखों की जलन, पित्त व गर्मी से रक्षा होती है।

२. ठंडाई : जीरा व सौंफ दो-दो चम्मच, चार चम्मच खसखस, चार चम्मच तरबूज के बीज, १५-२० काली मिर्च व २०-२५ बादाम रात भर पानी में भिगोकर रखें। सुबह बादाम के छिलके उतारकर सब पदार्थ खूब अच्छे से पीस लें। एक किलो मिश्री अथवा चीनी में चार लीटर पानी मिलाकर उबालें। एक उबाल आने पर थोड़ा-सा दूध मिलाकर ऊपर का मैल निकाल दें। अब पिसा हुआ मिश्रण, एक कटोरी गुलाब की पत्तियाँ तथा १०-१५ इलायची का चूर्ण चाशनी में मिलाकर धीमी आँच पर उबालें। चाशनी तीन तार की बन जाने पर मिश्रण को छान लें, फिर ठंडा करके काँच की शीशी में भरकर रखें।

उपयोग : ठंडे दूध अथवा पानी में मिलाकर दिन में या शाम को इसका सेवन कर सकते हैं। यह सुवासित होने के साथ-साथ पौष्टिक भी है। इससे शरीर की अतिरिक्त गर्मी नष्ट होती है, मस्तिष्क शांत होता है, नींद भी अच्छी आती है।

३. आम का पना : कच्चे आम को पानी में उबालें। ठंडा होने के बाद उसे ठंडे पानी में मसलकर रस बनायें। इस रस में स्वाद के अनुसार गुड़, जीरा, पुदीना, नमक आदि मिलाकर खासकर दोपहर के समय इसका सेवन करें। गर्मियों में स्वास्थ्य-रक्षा हेतु अपने देश का यह एक पारम्परिक नुस्खा है। इसके सेवन से लू लगने का भय नहीं रहता।

४. गुलाब शरबत : डेढ़ कि.ग्रा. चीनी में देशी गुलाब के १०० ग्रा. फूल मसलकर शरबत बनाया जाय तो वह बाजारू शरबतों से पचासों गुना हितकारी है। सेक्रीन, रासायनिक रंगों और विज्ञापन से बाजारू शरबत महँगे हो जाते हैं। आप घर पर ही यह शरबत बनायें। यह आँखों व पैरों की जलन तथा गर्मी का शमन करता है। पीपल के पेड़ की डालियाँ, पत्ते, फल मिलें तो उन्हें भी काट-कूट के शरबत में उबाल लें। उनका शीतलतादायी गुण भी लाभकारी होगा।

अपवित्र पदार्थों से बने हुए, केमिकलयुक्त, केवल कुछ क्षणों तक शीतलता का आभास करानेवाले परंतु आंतरिक गर्मी बढ़ानेवाले बाजारू शीतपेय आकर्षक रंगीन जहर हैं। अतः इनसे सावधान ! ❑

औषधीय गुणों से भरपूर : ब्रह्मवृक्ष पलाश

जिसकी समिधा यज्ञ में प्रयुक्त होती है, ऐसे हिन्दू धर्म में पवित्र माने गये पलाश वृक्ष को आयुर्वेद ने 'ब्रह्मवृक्ष' नाम से गौरवान्वित किया है। पलाश के पाँचों अंग (पत्ते, फूल, फल, छाल व मूल) औषधीय गुणों से सम्पन्न हैं । यह रसायन (वार्धक्य एवं रोगों को दूर रखनेवाला), नेत्रज्योति बढ़ानेवाला व बुद्धिवर्धक भी है।

इसके पत्तों से बनी पत्तलों पर भोजन करने से चाँदी के पात्र में किये गये भोजन के समान लाभ प्राप्त होते हैं। इसके पुष्प मधुर व शीतल हैं। उनके उपयोग से पित्तजन्य रोग शांत हो जाते हैं। पलाश के बीज उत्तम कृमिनाशक व कुष्ठ (त्वचारोग) दूर करनेवाले हैं। इसका गोंद हड्डियों को मजबूत बनाता है। इसकी जड़ अनेक नेत्ररोगों में लाभदायी है।

पलाश व बेल के सूखे पत्ते, गाय का घी व मिश्री समभाग मिलाकर धूप करने से बुद्धि शुद्ध होती है व बढ़ती भी है। वसंत ऋतु में पलाश लाल फूलों से लद जाता है। इन फूलों को पानी में उबालकर केसरी रंग बनायें। यह रंग पानी में मिलाकर स्नान करने से आनेवाली ग्रीष्म ऋतु की तपन से रक्षा होती है, कई प्रकार के चर्मरोग भी दूर होते हैं।

पलाश के फूलों द्वारा उपचार : महिलाओं के मासिक धर्म में अथवा पेशाब में रुकावट हो तो फूलों को उबालकर पुल्टिस बना के पेडू पर बाँधें। अण्डकोषों की सूजन भी इस पुल्टिस से ठीक होती है।

प्रमेह (मूत्र-संबंधी विकारों) में पलाश के फूलों का काढ़ा (५० मि.ली.) मिश्री मिलाकर पिलायें।

रतौंधी की प्रारम्भिक अवस्था में फूलों का रस आँखों में डालने से लाभ होता है।

आँख आने पर (Conjunctivitis) फूलों के रस में शुद्ध शहद मिलाकर आँखों में आँजें।

वीर्यवान बालक की प्राप्ति के लिए : दूध के साथ प्रतिदिन एक पलाशपुष्प पीसकर दूध में मिला के गर्भवती माता को पिलायें, इससे बल-वीर्यवान संतान की प्राप्ति होती है।

पलाश के बीजों द्वारा उपचार : पलाश के बीजों में पैलासोनिन नामक तत्त्व पाया जाता है, जो उत्तम कृमिनाशक है। ३ से ६ ग्राम बीज-चूर्ण सुबह दूध के साथ तीन दिन तक दें। चौथे दिन सुबह १० से १५ मि.ली. अरण्डी का तेल गर्म दूध में मिलाकर पिलायें, इससे कृमि निकल जायेंगे।

बीज-चूर्ण को नींबू के रस में मिलाकर दाद पर लगाने से वह मिट जाती है।

पलाश के बीज आक (मदार) के दूध में पीसकर बिच्छूदंश की जगह पर लगाने से दर्द मिट जाता है।

छाल व पत्तों द्वारा उपचार : बालकों की आंत्रवृद्धि (Hernia) में छाल का काढ़ा (२५ मि.ली.) बनाकर पिलायें।

नाक, मल-मूत्रमार्ग अथवा योनि द्वारा रक्तस्राव होता हो तो छाल का काढ़ा (५० मि.ली.) बनाकर ठंडा होने पर मिश्री मिला के पिलायें।

बवासीर में पलाश के पत्तों की सब्जी घी व तेल में बनाकर दही के साथ खायें।

पलाश के गोंद द्वारा उपचार : पलाश का १ से ३ ग्राम गोंद मिश्रीयुक्त दूध अथवा आँवले के रस के साथ लेने से बल एवं वीर्य की वृद्धि होती है तथा अस्थियाँ मजबूत बनती हैं और शरीर पुष्ट होता है।

यह गोंद गर्म पानी में घोलकर पीने से दस्त व संग्रहणी में आराम मिलता है।

आप भी करो ऐसा अनुष्ठान

पूज्य बापूजी के चरणकमलों में बारम्बार प्रणाम !

मैंने यह सोचकर दो महीने की छुट्टी ली कि अहमदाबाद आश्रम में चालीस दिन का अनुष्ठान करूँगी । किंतु भगवान मेरे द्वारा और ही कुछ कराना चाहते थे, इस कारण ऐसा निमित्त बना कि मुझे उत्तरायण शिविर के बाद वापस लौटना पड़ा । आने से पूर्व १७ जनवरी २०११ को मैंने **'ऋषि प्रसाद सम्मेलन'** में भाग लिया । वहीं मुझे प्रेरणा हुई कि जब चालीस दिन हाथ में हैं तो क्यों न चालीस दिन का **'ऋषि प्रसाद सेवा अनुष्ठान'** कर लें । ऐसा सोचकर मैंने ११०८ सदस्य बनाने का संकल्प ले लिया । घर आकर अगले दिन से सेवा शुरू कर दी । मैंने सोचा, 'शहर से दूर जाकर भी अपने गुरु का प्रसाद **'ऋषि प्रसाद'** बाँटूँ ताकि उन्हें भी सुखी, स्वस्थ व सम्मानित जीवन की राह मिले, उनके जीवन में भी खुशियों के फूल खिलें ।'

हम जहाँ भी गये, सहयोग मिलता गया । एक बार तो हम लोगों ने मात्र एक घंटे में ४० सदस्य बनाये । १० दिन में ४११ सदस्य बने । किंतु एक बार भगवान ने मानो मेरी परीक्षा लेनी चाही । २२-२३ फरवरी व १० मार्च को हैदराबाद में बंद के कारण कर्फ्यु जैसी तनावपूर्ण स्थिति थी, जिसमें कहीं आना-जाना सम्भव नहीं था लेकिन

बापू के दीवाने, झुठलाये नहीं जाते ।
कदम रखते हैं आगे तो लौटाये नहीं जाते ॥
चाहे जितने तूफान आयें या चलें फिर आँधियाँ ।
इरादे हैं मजबूत तो छू लेंगे बुलंदियाँ ॥

मैंने तो मेरे बापूजी का स्मरण करके उन्हींका नाम लेकर अपना सेवाकार्य जारी रखा और परिणामस्वरूप ११०८ तो क्या १२५० सदस्य बन गये । मेरे लिए यह एक रोमांचक अनुभव है । अभी तक केवल ध्यान में बैठने पर ही रोमांचक अनुभूतियाँ होती थीं किंतु इस बार वैसी ही अनुभूतियाँ चालीस दिन की इस सेवा में हुईं । 'सेवा ही साधना है'- इस बात का मुझे अपने जीवन में प्रत्यक्ष अनुभव हुआ ।

गुरुदेव से प्रार्थना है कि सेवा की यह यात्रा यूँ ही चलती रहे ताकि हम आंध्र प्रदेश के घर-घर में 'ऋषि प्रसाद' पहुँचा सकें । **- बीना खन्ना**

अष्टलक्ष्मी मंदिर, हैदराबाद (आं.प्र.).
मो. नं. : ९३९६६३५४७६. ❒

नाम-प्रताप से सुनामी से सुरक्षा

मैं तोशिबा एम्बेडेड सॉफ्टवेअर कम्पनी (बैंगलोर) में टीम लीडर (संघ-प्रमुख) के पद पर काम करता हूँ। मैंने २००७ में पूज्य बापूजी से मंत्रदीक्षा ली थी। १२ दिसम्बर २०१० को मैं व्यापार-यात्रा (बिजनेस टूर) के तौर पर टोकियो (जापान) गया था। ११ मार्च २०११ को मुझे भारत वापस आना था। कम्पनी का प्रस्ताव था कि मैं कुछ दिन और रुक जाऊँ। उस समय कम्पनी का प्रस्ताव मैंने मान लिया।

जापान प्रवास के दौरान लाख व्यस्तताओं के बाद भी मैं प्रतिदिन गुरुमंत्र के जप एवं सत्संग सुनने का नियम पूरा करता था। एक दिन सुबह जब मैं गुरुमंत्र का जप कर रहा था तो एकाएक मुझे प्रेरणा हुई कि 'तू भारत वापस चला जा।' मैंने कम्पनी का वह प्रस्ताव ठुकरा दिया। ११ मार्च को सुनामी आने के दो घंटे पहले ही मैं टोकियो से बैंगलोर के लिए रवाना हो गया। सुनामी और न्यूक्लियर डैमेज (नाभिकीय हानि) ११ मार्च दोपहर को हुए थे। जापान में आयी यह एक बहुत बड़ी विपत्ति थी, जिससे बच के मैं गुरुजी की कृपा से ही सही-सलामत घर वापस आ सका।

सभी शिष्य रक्षा पाते हैं,
सूक्ष्म शरीर गुरु आते हैं।
सचमुच गुरु हैं दीनदयाल,
सहज ही कर देते हैं निहाल।

इन 'श्री आशारामायण' के वचनों का मुझे साक्षात्कार हुआ, भयंकर विपदाओं से मेरी रक्षा हो गयी।

- तारकेश्वर प्रसाद
बैंगलोर (कर्नाटक)।
मो. : ९८८६५६२६७५. ❒

संस्था समाचार

('ऋषि प्रसाद' प्रतिनिधि)

२५ फरवरी को संत ज्ञानेश्वर महाराज की तपःस्थली **आलंदी (पुणे, महा.)** स्थित **आश्रम** में एक बार फिर बही गुरुज्ञान-भक्ति-प्रेम की धारा। असंख्य भक्तों ने किया आध्यात्मिक रस का पान। भगवद्शरणयोग 'प्रार्थना' की महिमा बताते हुए पूज्य बापूजी ने कहा :

''आप अपनी विवशता, अपनी लाचारी, अपनी कमजोरी हृदयपूर्वक स्वीकार करें और भगवान की समर्थता स्वीकार करें तो पहली प्रार्थना में भी सफलता, भगवान की दया आ जाती है। भगवान किस निमित्त क्या, कैसे बनायें, वे तो परम समर्थ हैं।''

२६ फरवरी को **दौंड (महा.)** में 'मनुष्य-जन्म के उद्देश्य एवं उद्देश्यपूर्ति की दिशा में पड़ रहे हमारे कदम सही हैं या नहीं !' - इस महत्त्वपूर्ण विषय को बड़ी ही सरल भाषा में समझाते हुए पूज्यश्री ने कहा : ''अगर आप उनचास साल सही जीवन जिये हैं तो आपके जीवन में यह समझ आनी चाहिए कि 'जो छूट जाय उसका नाम संसार है और जो कभी न छूटे उसका नाम परमात्मा है। परमात्मा को पाने के लिए ही मनुष्य-जीवन मिला है।' अगर अब भी आसक्ति है और भगवान को पाने का इरादा नहीं है तो आपने उनचास साल गलत जीवन जिया है, व्यर्थ की कामनाओं में, व्यर्थ कल्पनाओं में, व्यर्थ कर्मों में आयुष्य नष्ट किया है।''

इसके बाद **२७ व २८ फरवरी** को अवसर आया प्रेमाभक्ति एवं विशुद्ध भगवद्ज्ञान के सत्संग-अमृत के लिए कितने ही वर्षों से प्रतीक्षारत, ऐसे 'दक्षिण की काशी' कहलानेवाले प्रसिद्ध तीर्थस्थल **पंढरपुर (महा.)** में सत्संग-वर्षा का। दूर-दूर से यहाँ आयी जनता एवं वारकरी सम्प्रदाय के भक्तों ने संकीर्तनयोगी नामदेवजी, कारुण्यावतार तुकारामजी, ज्ञानावतार एकनाथजी और योग-ज्ञानमूर्ति ज्ञानेश्वर महाराज इन सभीके दर्शन एक

साथ बापूजी में किये ।

बापूजी ने यहाँ उपस्थित भक्तों की भक्तिभावना को और भी ऊँचा उठाते हुए उसे ज्ञान-विवेक से सम्पन्न बनाया । आपश्री बोले : ''भगवान तुमको भगवान नहीं बनाते, भगवान तुमको अपने भगवत्तत्त्व का ज्ञान देकर अपने से मिलाते हैं । जैसे समुद्र तरंग को समुद्र नहीं बनाता है अपितु उसे बोलता है कि 'तू पानी है । तू और मेरा आत्मा एक है ।' ऐसे ही आत्मा-परमात्मा के एकत्व का प्रसाद भगवान देते हैं ।''

२८ फरवरी की शाम अहमदनगर (महा.) एवं **१ व २ मार्च** को **नासिक (महा.)** में पूज्य बापूजी का एकांतवास रहा ।

३ से ६ मार्च (दोपहर) तक **नासिक (महा.)** में '**शिवरात्रि महोत्सव**' एवं '**विद्यार्थी तेजस्वी तालीम शिविर**' सम्पन्न हुआ । यहाँ पूज्य बापूजी ने अपनी सहज, अनूठी शैली में देश-विदेश से लाखों की संख्या में आये भक्तों को आत्मशिव के ज्ञानामृत का पान कराया । त्र्यम्बकेश्वर की नगरी में त्रितापों से मुक्ति देनेवाली आत्मशिव की उपासना का दिव्य दुर्लभ अवसर प्रदान कर जन्म-जन्म की दुर्वासना और हीन संस्कारों को अपनी पावन दृष्टिमात्र से भस्मीभूत कर देनेवाले शिवस्वरूप पूज्य बापूजी का अनुपम सान्निध्य पाकर साधक-भक्त निहाल हो उठे ।

भगवान की प्रीति पाने का राज समझाते हुए पूज्य बापूजी ने कहा : ''जहाँ अपनापन होता है, वहाँ प्रीति होती है । जिसकी आवश्यकता होती है, उसमें प्रीति होती है । भूख लगती है तो रोटी में, प्यास लगती है तो पानी में, ठंड लगती है तो गर्म कपड़ों में प्रीति होती है । ऐसे ही यह संसार नश्वर है और दुःख देता है किंतु भगवान सुखस्वरूप, प्राणिमात्र के सुहृद हैं, परम आनंदस्वरूप हैं । वे अपने लगेंगे तो उनमें प्रीति होगी अथवा उनको पाने की आवश्यकता लगेगी तो प्रीति होगी ।''

यहाँ १०८ बाल संस्कार केन्द्र खुलवानेवाली समितियों के संस्कार-सेवा प्रभारियों को पूज्य बापूजी के करकमलों से स्वर्ण-पदक पाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ ।

नासिक के भक्तों को सत्संग-प्रसाद से परितृप्त करते हुए पूज्य बापूजी उसी शाम **६ मार्च** को **लासलगाँव (महा.)** पहुँचे । यहाँ की जनता को सत्संग-अमृत का पान करा के आपश्री **मनमाड (महा.)** के प्यारों में भगवद्रस बाँटने आ गये । पूज्यश्री उवाच : ''भगवान का जो आत्मा है, वह सर्वव्यापक है तो हमारे सहित सर्वव्यापक है । जैसे पानी में तरंग अनेक हैं, बुलबुले अनेक हैं लेकिन पानी तत्त्व एक है । ऐसे ही शरीर के रूप अनेक हैं, आकृतियाँ अनेक हैं लेकिन परब्रह्म परमात्मा, चैतन्य आत्मा एक है ।''

७ मार्च की **सुबह** का एक सत्र **मालेगाँव (महा.)** के नाम रहा । वहाँ के लोगों को सत्संग-गंगा में स्नान करा के पूज्य बापूजी अहमदाबाद आश्रम में एकांतवास के लिए पधारे । **९ मार्च (सुबह)** आपश्री ने **नागपुर (महा.)** के लिए प्रस्थान किया । वहाँ **९** व **१० मार्च** को पूज्यश्री का एकांतवास रहा ।

फिर शुरू हुआ होलिकोत्सव का अनोखा सिलसिला । प्रतिवर्ष बढ़ते जा रहे जनसागर को ध्यान में रखते हुए जिस प्रकार गुरुपूर्णिमा-महोत्सव एक से दो, दो से चार और चार से अब बारह-बारह स्थानों पर मनाया जाने लगा है, वही स्थिति अब होलिकोत्सव की बनती जा रही है । होलिकोत्सव का आयोजन भी बढ़ते-बढ़ते छः स्थानों तक पहुँच चुका है, फिर भी सूरत के होलिकोत्सव में जनता का हुजूम कम नहीं होता । (देखिये मुखपृष्ठ - १ व ४)

पूज्य बापूजी के सान्निध्य में जैसी होली होती है ऐसी होली तो **न भूतो न भविष्यति !** पूज्यश्री एक तरफ शरीर के सभी दोषों को हर लेनेवाले पलाश के फूलों एवं अन्य प्राकृतिक विधि से बनाये गये रंगों से तन को रँग देते हैं, वहीं दूसरी तरफ ब्रह्मज्ञान का सत्संग देकर भगवत्प्रीति के मजीठे रंग में अंतःकरण को, मन-मस्तिष्क को भी भगवद्रस, भगवद्ज्ञान से सराबोर कर देते हैं । इस सिलसिले में सत्संग एवं होली के रंग की पहली बरसात **११ व १२ मार्च** को **नागपुर (महा.)** में हुई ।

होलिकोत्सव के इस प्रथम पड़ाव में पूज्यश्री के सत्संग में भारतीय जनता पार्टी के राष्ट्रीय अध्यक्ष नितिन गडकरी उपस्थित हुए । उन्होंने अपने श्रद्धा-सुमन अर्पित करते हुए कहा : **''श्रद्धेय पूज्य बापूजी ने मुझे आशीर्वाद दिया है । उनके आशीर्वाद से मुझे समाज में अच्छा कार्य करने की प्रेरणा मिलेगी । मुझे कोई बड़ा पद नहीं चाहिए । जो गरीब हैं, शोषित हैं, उनकी सेवा अच्छी तरह से मेरे द्वारा हो इसके लिए प्रभु मुझे आशीर्वाद दें, यही मेरी आपसे प्रार्थना है ।**

लोकप्रबोधन और लोकसंस्कार का बहुत अच्छा कार्य आपके द्वारा हो रहा है । करोड़ों लोगों को जीवन जीने का मार्ग आपके विचारों से मिलता है । संस्कार और शिक्षा के माध्यम से आपने यह जो लोकप्रबोधन किया है, इससे हमारे देश में और समाज में अच्छे नागरिक तैयार होंगे जो देश और समाज का गौरव बढ़ाते जायेंगे । आपका सत्संग हमारे जैसे अनेक छोटे-मोटे लोगों के जीवन में समाज के लिए काम करने की प्रेरणा देगा और हमको जीवन की दिशा दिखायेगा । बापूजी से बहुत-बहुत आशीर्वाद मिला । सत्संग में आने का अवसर मिला, ऐसे महान संत का सत्संग-वचन, आशीर्वाद मिला, मैं बहुत भाग्यशाली हूँ ।''

पूज्य बापूजी ने यहाँ भगवत्प्रसादजा मति की महत्ता बतायी : ''जिसके जीवन में सत्संग नहीं है उसका दुर्भाग्य है । उसके जीवन में भगवद्शांति नहीं है, भगवद्ज्ञान नहीं है, भगवत्प्रसादजा मति नहीं है । भगवत्प्रसादजा मति के बिना दुःखों का अंत नहीं होता ।''

१३ व **१४ मार्च** को पूज्यश्री ने **ऐरोली (नवी मुंबई, महा.)** वासियों को सत्संग-सरिता में अवगाहन कराया एवं होली के रंग का निमित्त बनाकर भगवान के ज्ञान और भगवत्प्रीति के रंग से उनके अंतःकरण को रँग दिया । वास्तविक कर्तव्य की याद दिलाते हुए प्राणिमात्र के परम हितैषी पूज्य बापूजी ने कहा : ''मौत आकर अचानक आपको ले जाय उसके पहले जिस काम के लिए आपने जन्म लिया है वह काम कर लो । ऐसे काम में मत पड़ो जो दूसरे लोग कर सकते हैं । जो काम तुम्हारे बिना कोई नहीं कर सकता वह काम तुम जल्दी से कर लो । जैसे भोजन करना, नींद करना तुम्हारे बदले में कोई नहीं कर सकता, ऐसे ही तुम्हारे बदले में कोई आत्मज्ञान नहीं पा सकता, आत्मसाक्षात्कार नहीं कर सकता ।''

१५ व **१६ मार्च** का होलिकोत्सव व सत्संग कार्यक्रम **खाटू श्यामजी (राज.)** के पुण्यात्माओं की झोली में रहा । स्वास्थ्यप्रदायक पलाश-पुष्पों के रंग में रँगने के साथ ही पूज्यश्री ने भक्त-हृदयों पर भगवद्ज्ञान की भी अमृतवर्षा की । जीवन में आनेवाले सुख-दुःख के प्रसंगों का सदुपयोग करके उनसे पार पहुँचने की कुंजी देनेवाले ये फौलादी वचन पूज्यश्री ने कहे : ''सुख और दुःख अनित्य हैं । ये हमारा विकास करने के लिए आते हैं । सुख आते हैं तो उदार बनकर दूसरे के दुःख को हरने में लगना चाहिए और दुःख आते हैं तो संसार की इच्छा, वासना, आकांक्षा, अहंकार मिटाने में लगना चाहिए । जिनके जीवन में सत्संग है, वे दुःख आने पर विवेक जगाते हैं, अनासक्ति जगाते हैं, वैराग्य जगाते हैं । दुःख से भागते नहीं हैं, दुःख को भगाते नहीं हैं, दुःख के सिर पर पैर रखकर ऊपर उठ जाते हैं ।''

१७ व १८ मार्च (दोपहर) को **दिल्ली** में सत्संग-कार्यक्रम एवं होलिकोत्सव सम्पन्न हुआ । सद्गुरुदेव उवाच : ''सब जगह भगवान हैं और वे सत्स्वरूप, चेतनस्वरूप, आनंदस्वरूप हैं । जीव सुख के लालच और दुःख के भय से ही परेशान हो रहे हैं । रात्रि को कुछ नहीं करते तो गहरी नींद में कितनी शांति होती है ! 'मैं बड़ा, मैं बड़ा'- इस अहंकार के कारण लोग मारे जा रहे हैं । 'मैं सबसे श्रेष्ठ दिखूँ' - इस विडम्बना में ही परेशान हो रहे हैं ।''

दिल्ली के भक्तों को आनंदित-उल्लसित कर **१८ मार्च** की **शाम** पूज्य बापूजी **सूरत (गुज.)** पधारे । देश-विदेश से आये लाखों भक्तों ने पूज्य बापूजी की पीयूषवाणी का रसास्वादन किया । अपने प्यारे सद्गुरु के दर्शन-सत्संग पाने एवं उनके साथ होली खेलने आये साधक-भक्तों के दिल

में मानो यही भाव था कि '**मैं तो आज होली खेलूँ, अपने सद्गुरुजी के संग ।**' तो सद्गुरुदेव ने भी नहीं रखी कोई कसर... **भर पिचकारी सद्गुरु ने मारी, भीग गये सब अंग ।**

एक तरफ भक्तों का स्नेह-सागर अपनी सारी सीमाएँ तोड़ रहा था तो दूसरी तरफ बापूजी का प्यार बौछार बनकर बरस रहा था । बरबस दिल की पुकार होंठों तक चली आती थी कि '**जोगी रे क्या जादू है तेरे प्यार में !**' कौन कितना भीगा, किसने क्या पा लिया, यह तो कोई भक्तहृदय ही जान सकता है ! श्रद्धाहीन कुतर्की, नास्तिक, अहंकार में उलझे हुए, अहंकार के सताये हुए क्या जानें !

१८ से २० मार्च (दोपहर) तक के इस पूर्णिमा-दर्शन एवं होली-महोत्सव के निमित्त आये भक्तों को पूज्यश्री ने भर-भर के पिलायीं आत्मरस की प्यालियाँ । पूज्यश्री ने कहा : ''उसीका जीवन सही है जो अंतरात्मा का रस पाकर संसार को रसीला बनाता है । उसका जीवन व्यर्थ है जो संसार की चीजें इकट्ठी करके सुखी होना चाहता है । संसार की चीजें उपयोग करने के लिए लो । उन्हें इकट्ठी करके परलोक भी नहीं ले जा सकते हो और भोगी बनकर संतुष्ट भी नहीं हो सकते हो ।''

२० मार्च की शाम को **दिल्ली आश्रम** में एकांतवास करके पूज्यश्री **२१** को **लखनऊ (उ.प्र.)** पहुँचे । **२२ से २४ मार्च** तक **लखनऊ** में हुई सत्संग-वर्षा व होलिकोत्सव में श्रद्धालुओं को दिव्य ज्ञान का अंजन देते हुए पूज्य बापूजी ने कहा : ''भगवान सत्स्वरूप हैं, चेतनस्वरूप हैं, आनंदस्वरूप हैं, प्राणिमात्र के सुहृद हैं और वे हमारा कभी त्याग नहीं कर सकते । शरीर को हम सदा रख नहीं सकते और परमेश्वर को कभी छोड़ नहीं सकते । जिसको रख नहीं सकते उस शरीर का संयम से सदुपयोग करो और जिसको छोड़ नहीं सकते उसको प्रीतिपूर्वक पुकारो । प्रीतिपूर्वक उसमें डूबो, प्रीतिपूर्वक उसमें अपने 'मैं' को मिला दो । तो आपका मंगल-ही-मंगल हो जायेगा । आपका दर्शन करने और वाणी सुननेवाले का भी मंगल हो जायेगा ।''

लखनऊवासियों को पलाश व भगवत्प्रेम के रंग में रँगकर पूज्यश्री ने तीर्थभूमि **नैमिषारण्य (उ.प्र.)** के लिए प्रस्थान किया और यहाँ **२५ व २६ मार्च** को सत्संग-गंगा बहायी, जिसमें डुबकियाँ लगाकर यहाँ के भक्तजन धन्य हुए, कृतकृत्य हुए । साथ ही सुप्रसिद्ध आचार्य श्री अनिल कुमार शास्त्रीजी एवं स्वामी श्री हरिहरानंद सरस्वतीजी ने भी सत्संग-लाभ लिया और उपस्थित भक्त-समुदाय को सम्बोधित किया ।

श्री अनिल कुमार शास्त्री, वेदव्यास धाम, नैमिषारण्य : ''आज हमारे परम सौभाग्य हैं कि उस तपःस्थली पर जहाँ बहुत पुरातन काल में ऋषि-मुनि विराजमान होते थे उसी काल के महापुरुष आज अपनी उसी तपःस्थली पर विराजमान हैं । आज वेदव्यासजी के पीठ पर स्वयं भगवान विराज रहे हैं और ८८,००० ऋषियों का समाज जुड़ा हुआ है । आज का यह दृश्य देखने का अवसर तो बड़े-बड़े योगियों को भी नहीं मिलता । देवता तो तरस रहे होंगे कि यदि हम होते बापूजी के सत्संग में तो यह आनंद हम भी प्राप्त कर लेते । आज स्वयं यहाँ वेदव्यासजी बापूजी के स्वरूप में विराजमान हैं ।''

स्वामी श्री हरिहरानंद सरस्वती, श्री ब्रह्मविज्ञान पीठ संस्थानम्, नैमिषारण्य : ''यह बड़े ही सौभाग्य का सुअवसर है जो हमारे-आपके बीच नैमिषारण्य में विश्व-कल्याणकारी जगत्प्रसिद्ध महापुरुष आशाराम बापूजी महाराज पधारे हैं ।

आज आप लोगों का बड़ा सुंदर सौभाग्य है, जो आपको **मनुष्यत्वं** – मनुष्य-शरीर, **मुमुक्षुत्वं** – मोक्ष की इच्छा और **महापुरुषसंश्रयः** – महापुरुष का आश्रय प्राप्त है । बस, आप लोग इसका लाभ उठायें और हम भगवान से प्रार्थना करते हैं कि हमारे श्री बापूजी महाराज, जुग-जुग जियें और आगे भी हम सब लोग उनके खूब दर्शन करें और हम यह चाहेंगे कि '**प्रति संबत अति होइ अनंदा ।**' प्रतिवर्ष इस प्रकार से महाराजजी पधारें और यहाँ के भक्तों को महाराजजी के दर्शनों का सौभाग्य और आशीर्वचन सुनने का सौभाग्य प्राप्त हो ।'' ❑